ज्ञानामृत

अप्रैल, 1989 वर्ष 24 ❋ अंक 10 मूल्य 1.75

१

२

६

७

३

५

४

१. दिल्ली (कृष्णा नगर) - महाशिवरात्रि पर्व पर आयोजित आध्यात्मिक समारोह का शुभारम्भ मोमबत्ती जलाकर करते हुए भ्राता एच० के० एल० भगत, सूचना एवं प्रसारण मंत्री, भारत सरकार, ब्र० कु० आत्मप्रकाश, सम्पादक, ज्ञानामृत तथा अन्य।

२. अमृतसर - स्वर्ण मन्दिर के मुख्य ग्रन्थी भ्राता रामसिंह जी को ईश्वरीय उपहार भेंट करते हुए ब्र० कु० मनोहर बहन।

३. दिल्ली (साऊथ एक्सटेंशन) - शिवरात्रि के शुभ पर्व पर आयोजित एक आध्यात्मिक समारोह में दिल्ली के उपराज्यपाल भ्राता रमेश भण्डारी को पुष्प-गुच्छ भेंट करते हुए ब्र० कु० सरोज।

४. जयपुर में आयोजित 'शिव-दर्शन प्रदर्शनी' का उद्घाटन करते हुए राजस्थान विधान सभा के अध्यक्ष भ्राता गिरीराज तिवारी जी।

५. बम्बई (कोलाबा) - ५३ वीं महाशिवरात्रि के अवसर पर आयोजित एक समारोह में उपस्थित हैं दादी आत्ममोहिनी, ब्र० कु० रमेश, नारी गुरसहानी जी, भ्राता राजकमल जी।

६. जालन्धर - शिवरात्रि के महापर्व पर आयोजित विशाल शोभा-यात्रा के अवसर पर उपस्थित गणमान्य व्यक्तियों को आत्म-स्मृति का तिलक लगाते हुए ब्र० कु० मनोहर इन्द्रा।

७. कलकत्ता - ५३वीं शिवरात्रि के अवसर पर शिवध्वजारोहण करते हुए ब्र० कु० निर्मल शान्ता, संयुक्त प्रशासिका, ई० वि० वि०

उदयपुर - संयुक्त राष्ट्र संघ के महासचिव भ्राता जे० पी० डे० कयुलर, उनकी धर्मपत्नी तथा दादी प्रकाशमणि, मुख्य प्रशासिका, ई० वि० वि० तथा अन्य एक ग्रुप फोटो में।

कलकत्ता — ५३ वीं महाशिवरात्रि के उपलक्ष्य में निकाली गई शांति-यात्रा का एक दृश्य

बरनाला में आयोजित 'विशाल आध्यात्मिक मेले' का उद्घाटन करते हुए भ्राता के० के० शर्मा, एम० डी० एम०

नेल्लोर में आयोजित साधु परिषद् की सभा में ईश्वरीय सन्देश देती हुई ब्र० कु० सुगंध।

महबूबनगर भ्राता पी० चन्द्रशेखर, मंत्री, आंध्र प्रदेश को ईश्वरीय सौगात भेंट करती हुई ब्र० कु० नीरा बहन।

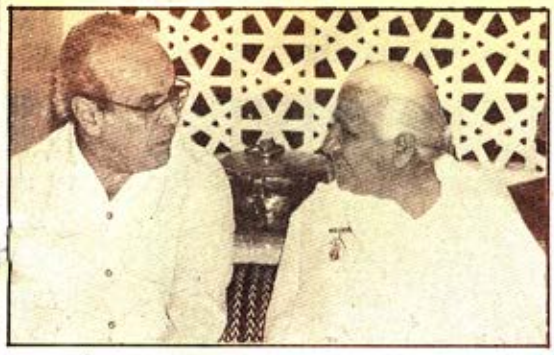

उदयपुर - संयुक्त राष्ट्र संघ के महासचिव भ्राता जावेर पिरिज डि० क्युलर से दादी प्रकाशमणि, मुख्य प्रशासिका, ब्र० कु० वि० वि० सर्व के सहयोग से सुखमय संसार कार्यक्रम पर वार्तालाप करती हुई।

मोदीनगर शिवजयन्ती पर आध्यात्मिक कार्यक्रम में अपने उद्गार प्रकट करते हुए नगर पालिका अध्यक्ष भ्राता रामआसरे शर्मा जी

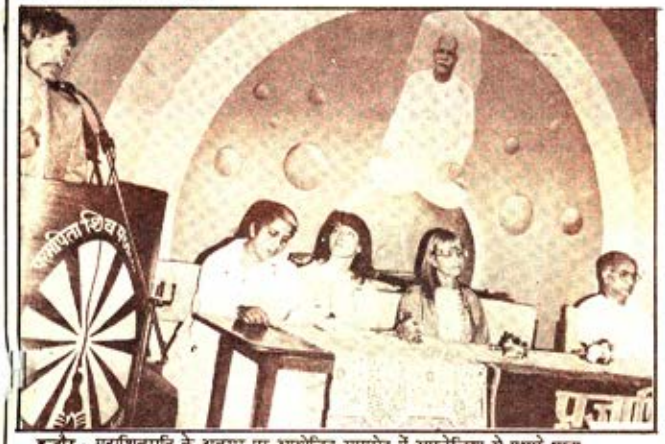

इन्दौर - महाशिवरात्रि के अवसर पर आयोजित समारोह में आस्ट्रेलिया से पधारे भ्राता रोबिन रामसे, निर्देशक एवं अभिनेता भाषण करते हुए।

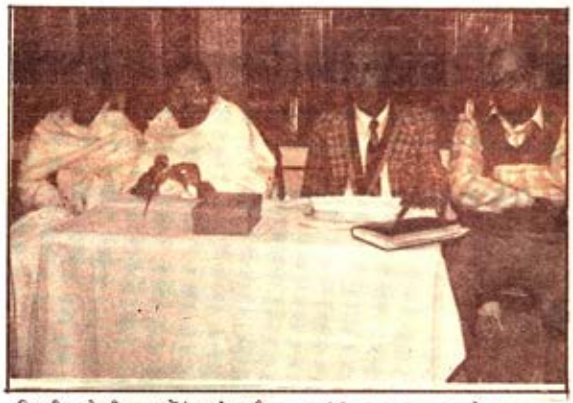

दिल्ली - रोटरी क्लब में 'राजयोग और स्वास्थ्य' विषय पर प्रवचन करते हुए ब्र० कु० चक्रधारी बहन।

कानपुर में आयोजित आध्यात्मिक समारोह में भाषण करते हुए भ्राता गरीब सिंह, संयुक्त निदेशक, कर्मधारी राज्य बीमा निगम।

दिल्ली (कृष्णा नगर) - ५३ वीं महाशिवरात्रि के अवसर पर आयोजित समारोह में उपस्थित जनसमूह को सम्बोधित करते हुए भ्राता सुखनलाला जी, पार्षद, दिल्ली। मंच पर विराजमान हैं भ्राता एच० के० एल० भगत, सूचना एवं प्रसारण मंत्री, ब्र० कु० जगदीश चन्द्र, मुख्य सम्पादक ज्ञानामृत, ब्र० कु० अक्षयप्रकाश, सम्पादक, ज्ञानामृत तथा अन्य।

Regd No. 10563/65-D (E)-70

काठमाण्डू - संयुक्त राष्ट्र संघ के महासचिव की धर्मपत्नी बहन मार्सिला पेरज द क्यूलर को ईश्वरीय उपहार देने के पश्चात् उनसे मुलाकात करते हुए ब्र० कु० राज बहन।

विशाखापटनम में आयोजित एक आध्यात्मिक कार्यक्रम में मंच पर विराजमान हैं (बाएं से) भ्राता जयरामन, आई० ए० एस०, ब्र० कु० जगदीश चन्द्र, मुख्य सम्पादक, ज्ञानामृत, ब्र० कु० हेमा बहन।

अहमदाबाद - भा० ज० पा० के नेता भ्राता अटल बिहारी बाजपेयी से ज्ञान-वार्तालाप करते हुए ब्र० कु० चन्द्रिका बहन।

वाराणसी - दक्षिणी अमेरिका के ब्राजील चर्चेज के महासचिव ए० एम० अलमेरा को ईश्वरीय साहित्य भेंट करते हुए ब्र० कु० सुरेन्द्र बहन।

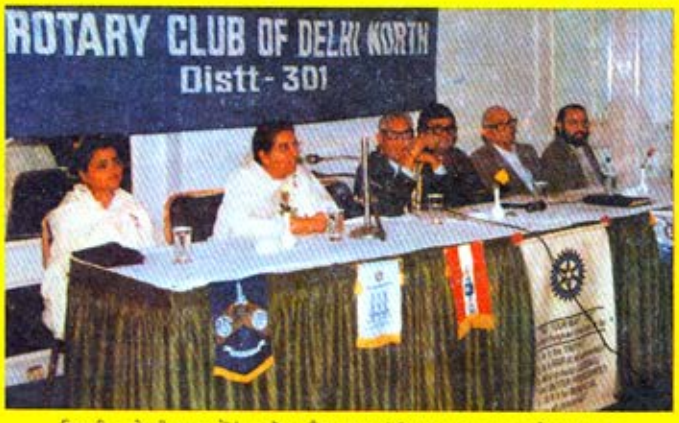

दिल्ली - रोटरी क्लब में 'राजयोग और स्वास्थ्य' विषय पर प्रवचन करते हुए ब्र० कु० चक्रधारी बहन।

ताण्डूर - महाशिवरात्रि पर्व पर आयोजित समारोह में भ्राता चन्द्रशेखर एम० एल० ए० को ईश्वरीय सौगात देते हुए ब्र० कु० जगदेवी।

अमृत - सूची

१. करना है जो भी करले, यह वक्त जा रहा है (सम्पादकीय) २

२. 'अमृतवेला' — विघ्न-विनाशक स्थिति की वेला ४

३. ५३वीं शिवजयन्ती के उपलक्ष्य में आयोजित आध्यात्मिक कार्यक्रमों की झलक (सचित्र) ५

४. सहज राजयोगाभ्यास द्वारा अपराधों में कमी ९

५. कहानी एक भटके हुए राही की (अनुभव) ११

६. "हमनें देखा है यूं" (कविता) १२

७. पुरूषार्थ की राहें १३

८. स्व-धर्म की शक्ति १५

९. संकल्प-शक्ति और उसकी सिद्धि १७

१०. सेवा का फल — अखुट खज़ाने (कहानी) २०

११. तुम पवित्रता की रक्षा करो, पवित्रता तुम्हारी स्वतः ही रक्षा करेगी (एकांकी) २१

१२. तज कर अगर-मगर तू.....(कविता) २५

१३. आत्म-परिवर्तन से विश्व-परिवर्तन (कविता) २५

१४. ५३वीं महाशिवरात्रि पर की गई सेवाओं का सचित्र समाचार २६

१५. आल इन वन (All in One) ३१

फार्म-४

नियम ८ के अंतर्गत अपेक्षित पत्रिका का विवरण

१. प्रकाशन स्थान	बी 9/19, कृष्ण नगर, दिल्ली-51
२. प्रकाशनावधि	मासिक
३. मुद्रक का नाम	ब्र०कु० आत्मप्रकाश
क्या भारतीय नागरिक हैं?	हाँ
पता	बी-9/19, कृष्ण नगर, दिल्ली-51
४. प्रकाशक का नाम	ब्र०कु० आत्मप्रकाश
क्या भारतीय नागरिक हैं?	हाँ
पता	उपरोक्त
५. मुख्य सम्पादक का नाम	ब्र०कु० जगदीश चन्द्र
क्या भारत का नागरिक है?	हाँ
	19/17, शक्तिनगर, दिल्ली
६. संपादक का नाम	ब्र०कु० आत्मप्रकाश
क्या भारतीय नागरिक हैं?	हाँ
पता	उपरोक्त
उन व्यक्तियों के नाम जो समाचार-पत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक के साझेदार या हिस्सेदार हों।	प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय

मैं, ब्र०कु० आत्मप्रकाश, एतद् द्वारा घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिये गये विवरण सही हैं।

ब्र०कु० आत्मप्रकाश
प्रकाशक

मारुबी में आयोजित आध्यात्मिक समारोह में मंच पर विराजमान हैं भ्राता नाथा भाई पटेल, भ्राता ओ० आर० पटेल, बहन श्रीदेवी ओझा, ब्र० कु० भारती, ब्र० कु० गीता तथा अन्य।

करना है जो भी कर ले, यह वक्त जा रहा है

यह बात तो सभी मानते हैं कि मनुष्य कर्म के बिना नहीं रह सकता। किसी कर्म को छोड़ना भी एक कर्म है, उसे रोकना भी एक कर्म है और उसे न करने की चेष्टा करना भी एक मानसिक कर्म है। जो आत्मा इस कर्म-क्षेत्र पर आ जाती है और शरीर रूपी कर्मेन्द्रियों के संघात को ले लेती है, वह कर्म के बिना नहीं रह सकती-यहां तक कि निद्रा करना भी एक कर्म है जो कि शरीर को विश्राम देने के लिए किया जाता है।

उपरोक्त के अतिरिक्त प्रायः यह भी सभी मानते हैं कि मनुष्य जैसा कर्म करता है, वैसा ही उसका फल भी भोगता है। यह तो हो सकता है कि मनुष्य को यह मालूम न हो कि कौन सा फल किस कर्म का परिणाम है, और यह भी हो सकता है कि उसे कर्म का फल जल्दी मिलेगा या देर में। परन्तु जो कर्म कर लिया गया हो, उसका फल तो भोगना ही पड़ता है। मनुष्य उसे न भोगना चाहे तो भी वह उससे छूट नहीं सकता। उससे छूटने का एकमात्र उपाय योग-तपस्या ही है। परन्तु देखा गया है कि कई बार मनुष्य द्वारा किया गया निकृष्ट कर्म ऐसा बलवान होता है कि वह उसके मन को योग में भी रुचि नहीं लेने देता ।

जब कर्म और उसका फल निश्चित हैं और मनुष्य को कर्म करना ही है तो मनुष्य को चाहिए कि वो यह सोच ले और समझ ले कि उसे क्या करना है। मनुष्य का कोई भी कर्म निरुद्देश्य नहीं होता अथवा लक्ष्य-रहित या प्रयोजन के बिना नहीं हुआ करता। जब कोई मनुष्य कहता है कि मैंने इस कर्म को तो यों ही कर लिया, मेरे मन में कोई लक्ष्य तो निर्धारित था ही नहीं, ऐसी स्थिति में भी कुछ-न-कुछ तो उद्देश्य होता ही है। यह तो हो सकता है कि उसके चेतन को यह स्पष्ट न हो कि उसका क्या उद्देश्य है परन्तु उसका 'अवचेतन' (So called 'unconscious' mind) उसे किसी उद्देश्य से ही किसी कर्म के लिए प्रेरित कर रहा होता है।

अतः जब कर्म किये बिना नहीं रहा जा सकता और उसका फल भी अनिवार्य रूप से भोगना ही पड़ता है और कर्म का उद्देश्य भी होता ही है, तो मनुष्य को चाहिए कि कर्त्ता और फल-भोक्ता को जानने का प्रयत्न करे, कर्म-गति का भी ज्ञान प्राप्त करे और कर्म के मूल लक्ष्य को भी जाने। यह संसार तो परिवर्तनशील है और मनुष्य का शरीर भी परिवर्तन के नियम के आधीन है तब अवश्य ही कोई ऐसा शाश्वत अथवा नित्य **'कर्त्ता'** है जो कई वर्षों के बाद अथवा कई जन्मों के बाद भी उसका फल भोगता है। यदि शरीर से भिन्न किसी शाश्वत एवं नित्य कर्त्ता को न माना जाए और इस परिवर्तनशील शरीर ही को कर्त्ता, भोक्ता माना जाए तो इस शरीर का अन्त होने पर उन कर्मों का फल कौन भोगेगा जिनका फल अभी मिला ही नहीं? अन्यश्च, ७० वर्ष पहले मनुष्य का जो शरीर था जिसके द्वारा उसने अपने दांतों से किसी को काटा था, तो अब जब उसके वे दाँत ही नहीं रहे और शरीर भी जर्जरा हो गया तथा बहुत हद तक परिवर्तित हो गया, तब उसका फल कौन भोगेगा? जबकि दण्ड विधान का यह मौलिक नियम है कि सजा उसे मिलनी चाहिए जिसने अपराध किया हो। अब जब अपराध करने वाले शरीर के स्थान पर मानो एक प्रायः दूसरा ही शरीर आ गया, तो उस दूसरे शरीर को दण्ड मिलना तो न्याय की नीति-रीति के विरुद्ध होगा। अतः सबसे पहले इस सत्य सिद्धान्त का बोध आवश्यक है कि कर्त्ता और भोक्ता एक त्रैकालिक सत्ता आत्मा ही है; वही मेरा स्वत्व है अर्थात् वही मैं हूँ जो कि अपने कर्म के पाश में स्वयं को बाँध कर अपने ही दण्ड की नींव रखता हूँ और स्वयं ही मैं ऐसे कर्म भी कर सकता हूँ जिन द्वारा कि इन पाशों से मुक्त हो सकें।

परन्तु इस प्रसंग में मुख्य बात तो यह है कि कर्म करने से पहले मनुष्य को ठीक वैसे ही अपने लक्ष्य का बोध होना चाहिए जैसे कि यात्रा प्रारम्भ करने से पहले मनुष्य अपनी मंजिल अथवा गन्तव्य स्थान को निर्धारित कर लेता है। मनोविज्ञान की दृष्टि से यह देखा गया है कि मनुष्य का जैसा लक्ष्य होता है वैसे ही उसके लक्षण भी होते हैं अथवा जिस ओर उसका ध्यान हो, उस ध्येय ही के गुण ध्याता में विराजमान होते हैं। अतः श्रेष्ठ कर्म करने के लिए श्रेष्ठ लक्ष्य का होना जरूरी है क्योंकि 'यथा लक्ष्य तथा लक्षण' के विधान के अनुसार जब लक्षण श्रेष्ठ होंगे तभी कर्म भी श्रेष्ठ होंगे।

परन्तु इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि कई बार जब मनुष्य यह भी जान लेता है कि (१) कर्म का कर्त्ता, भोक्ता आत्मा है और कि (२) कर्म का फल अनिवार्य रूप से मिलता है और कि (३) श्रेष्ठ कर्म श्रेष्ठ लक्षण होने पर ही होते हैं और कि (४) श्रेष्ठ लक्षण मनुष्य के श्रेष्ठ लक्ष्य निर्धारित करने से आते हैं, तब भी मनुष्य श्रेष्ठ लक्ष्य अपनाकर श्रेष्ठ कर्म करने में ढील करता है। उसका कारण यह है कि वह समय अभाव का कारण बताकर, अपनी व्यस्तता को सामने रख

कर, परिस्थितियों का बहाना देकर तथा अन्य-अन्य व्यवधानों की दुहाई देकर लक्ष्य की ओर बढ़ता नहीं अथवा लक्षण धारण करता नहीं अथवा अपनी गति को तीव्रतर करता नहीं। वह इस प्रकार मन में उधेड़-बुन करता है कि - "अब जब यह नया वर्ष प्रारम्भ होगा, तब तो मैं दृढ़ मन से योग लगाया करूंगा...." नया वर्ष आने पर वह स्वयं से कहता है कि अभी तो अमुक परिस्थिति है, अमुक कारण सामने है, १८ जनवरी से कार्य शुरू कर दूंगा। फिर दूसरा कोई कारण उपस्थित हो जाता है, तो यह सोच कर तसल्ली कर लेता है कि सबसे बड़ा उत्सव तो शिवरात्रि है, शिव से बड़ा तो कोई है नहीं। इसलिए यह शुभ काम तभी से शुरू करूंगा। शिवरात्रि पर वह फिर टालमटोल करते हुए स्वयं को समझाता है कि अब मैं अन्धेरी रात से तो निकल ही चुका हूँ और शिव से मेरा सम्बन्ध तो हो ही चुका है, अब तो मुझे स्वयं पर योग का रंग चढ़ाना है और रंग का त्योहार तो होली है, इसलिए होली पर पुरानी बातों को 'हो'-'ली' (जो होना था सो हो गया) कहकर आत्मा को योग के केसरी रंग में रंगूगा। परन्तु जिसको बहाना बनाने की और कार्य को कल पर डालने की आदत पड़ चुकी हो तो वह होली आने पर भी कहेगा कि आत्मा को नियमों में बांधने का त्योहार तो रक्षाबन्धन है, अतः रक्षाबन्धन से ही स्वयं को ज्ञान के कायदों में व योग की स्थिति में बांधने का व्रत लूंगा और फिर रक्षाबन्धन आने पर सोचेगा कि श्री कृष्ण ही श्री नारायण हैं और श्री नारायण ही मेरा लक्ष्य है और लक्ष्य से लक्षण आते हैं, इसलिए जन्माष्टमी से ही बदलूंगा। फिर जन्माष्टमी भी गुजर जाएगी तो सोचेगा कि आध्यात्मिक शक्ति के बिना तो व्यक्ति आगे बढ़ ही नहीं सकता और शक्तियों का त्योहार तो नवरात्रि है। फिर इस प्रकार यह सोचते हुए कि माया रूपी रावण पर विजय प्राप्त करने का त्योहार दशहरा और आत्मा की ज्योति जगाने का त्योहार दीवाली है, वह अपने संकल्प को ढीला करता रहेगा और **ज्ञान का उल्टा चक्र चलाकर** अपने को धोखे में डालकर न लक्ष्य को धारण करेगा, न लक्षणों को और एक दिन स्वयं ही काल का ग्रास बनकर उसके पेट में धारण हो जाएगा अथवा अज्ञानता की कब्र में दाखिल हो जाएगा।

इसी प्रसंग में कहा गया है –अहो माया, तू कितनी दुस्तर और अनेक रूप-धारिणी है। तू ग्राह बनकर गज की टांग को भी पकड़ लेती है!

माया के इस दुस्तर प्रभाव को सामने रखते हुए बाबा ने हम बच्चों को यह नारा दिया–"अब नहीं तो कभी नहीं।" इसी को ही सामने रखकर यह गीत भी बना हुआ है–"करना है जो भी कर ले, यह वक्त जा रहा है।"

–जगदीश

मंगलोर में हुए आध्यात्मिक कार्यक्रम में विधान सभा सदस्य, प्रबंधक, जिला परिषद् के सदस्य तथा ब्र. कु. बहिनें चित्र में दिखाई दे रही हैं।

पुरी में आयोजित एक आध्यात्मिक कार्यक्रम में प्रवचन करती हुई ब्र० कु० निरुपमा बहन।

अमृत वेला विघ्न विनाशक स्थिति की वेला

ब्र० कु० जगरूप, कृष्णा नगर, दिल्ली

सन् १९७१ में हिन्दुस्तान और पाकिस्तान का भयंकर युद्ध चल रहा था। मिलट्री में मैं वायरलैस की डयुटी पर था युद्ध विराम होने से एक दो दिन पहले, एक दिन सांयकाल मैं ईश्वरीय ज्ञान के चिन्तन में मस्त हो, उपराम स्थिति में एक विषय कि **विश्व की सर्व समस्याओं का मूल देह अभिमान है और विश्व की सर्व समस्याओं का हल देही अभिमानी स्थिति है**–इस पर मनन चिन्तन कर कुछ लिख रहा था और विषय को एक चित्र के रूप में एक पेड़ बना रहा था। इतनी देर में मेरे आफिसर ने मेरे इस पेड़ रूपी चित्र को देख मुझे पाकिस्तानी सैना का जासूस समझ लिया और मेरे पर देख रेख रखनी शुरू कर दी। सैना में होने के कारण अनेक विघ्न आने लगे और वह आत्मा मेरे लिये विघ्न स्वरूप बन गई। विघ्नों को देखते ही बापदादा के महावाक्य मेरे सामने घूमने लगे कि अमृत वेला ही विघ्न विनाशक स्थिति की वेला है, अमृत वेला ही अनेक जन्मों के विकर्म विनाश व अनेक प्रकार के हिसाब किताब चुक्तु करने की वेला है, अमृत वेला सर्व आत्माओं को स्नेह की, शान्ति और शक्ति की किरणें देने की वेला है –इन महावाक्यों को स्मृति में रख मैं प्रातः काल में विघ्न स्वरूप आत्मा के प्रति शुभ भावना रख इस स्थिति का विशेष अभ्यास करता रहा। कुछ दिन के पश्चात् उस आत्मा ने एक दृश्य देखा कि एक दिव्य ज्योति के नीचे सफेद वस्त्रधारी अनेक बहन भाई प्रकाशमय काया में खड़े हैं और धीरे-धीरे वह सफेद वस्त्रधारी हनुमान का रूप धारण कर रहे हैं। वह आत्मा हनुमान का भगत होने के कारण उसने सफेद वस्त्र धारियों में ईश्वरीय शक्ति को हनुमान के रूप में देखा और सत्यता को जाना और फिर ईश्वरीय ज्ञान की गहराई समझने के पश्चात् वही आत्मा अनेक आत्माओं को ईश्वरीय सन्देश देने के निमित्त बनी।

इस प्रकार ज्ञान मार्ग में विघ्नों का आना अनिवार्य है परन्तु अनुभव ऐसा कहता है कि सर्व विघ्नों की समाप्ति का एक मात्र साधन अमृतवेले की विघ्न विनाशक स्थिति में स्थित होना है। जैसे एक लोहे के गोले को अग्नि के संग से पूर्ण लाल कर दिया जाये तो वही लोहे का गोला लाईट माईट की किरणों को फैलाता है। ऐसे ही प्रातः काल के समय ज्ञान सूर्य बाप के सन्मुख बैठ स्वयं को भी मास्टर ज्ञान सूर्य की स्थिति में स्थित करना अर्थात् बाप समान मास्टर वरदाता का अनुभव करना, बाप दादा से पूर्ण लाईट माईट लेना और सर्व विश्व की आत्माओं तक फैलाना –यही विघ्न विनाशक स्थिति है।

वास्तव में योगी विघ्नों का स्वागत करता है अर्थात् तूफानों को तोहफे समझ स्वीकार करता है क्योंकि विघ्न, स्थिति की परिपक्वता के मीटर हैं। जैसे एक अच्छा विद्यार्थी परीक्षा का स्वागत करता है क्योंकि वह जानता है कि यही परीक्षा मुझे दूसरी क्लास में जाने का सर्टीफिकेट देगी, ऐसे ही ज्ञान-मार्ग में आये हुए विघ्न व परीक्षायें हमें अचलता और अडोलता का सर्टीफिकेट देती हैं। विघ्न लग्न को बढ़ाने का साधन बन जाते हैं। यज्ञ में शुरु से जितने भी विघ्न आये या किसी बहन भाई को व्यक्तिगत विघ्न आये तो बाप दादा ने उसके लिये सिर्फ एक ही मंत्र की श्रीमत दी कि **बच्चे योग से ही विघ्न समाप्त होंगे, बच्चे अमृत वेले उठ बाप-दादा से शक्ति लेकर सर्व आत्माओं को शक्ति का दान दो। मीठे बच्चे, अमृत वेले को पूर्ण सफल करो।**

हम अमृत वेले को सफल करने लिये व आलस्य और सुस्ती को पूर्ण त्याग कर विघ्न विनाशक व बाप-समान स्थिति का अनुभव करने के लिये अमृत वेले आंख खुलते ही स्मृति में लायें:

१ विश्व के अनादि पिता और आदि पिता अर्थात् बाप दादा ने मुझे मिलने का समय दिया हुआ है, दोनों मेरी इन्तजार में हैं।

२ अनेक भगत आत्मायें मेरा साक्षात्कार करने की इन्तज़ार में हैं।

३ तमोप्रधान प्रकृति मेरे सतोप्रधान प्रकम्पन्नों द्वारा अपनी प्यास बुझाने की इन्तज़ार में है।

४ मेरा दिव्य प्रकाशमय चोला मुझ आत्मा की सतोप्रधान स्थिति की इन्तज़ार में है।

इस प्रकार के संकल्पों को स्मृति में रखने से हम अमृत वेले स्वयं के प्रति और दूसरों के प्रति विघ्न विनाशक बन सकते हैं।

हाथरस -शिवजयन्ती महोत्सव के अवसर पर डा. बंगाली सिंह, विधायक को ईश्वरीय साहित्य भेंट करते हुए ब्र० कु० सीता बहन।

उदयपुर - संयुक्त राष्ट्र संघ के महासचिव से ज्ञान-वार्तालाप करते हुए ब्र० कु० निर्वैर जी।

अमृतसर में विशिष्ट व्यक्तियों के स्नेह मिलन के पश्चात् उन्हें प्रसाद देती हुई ब्र० कु० दादी मनोहर इन्द्रा जी।

जालन्धर - सर्व-धर्म सम्मेलन में पधारे वक्तागण ब्र० कु० राज, चक्रधारी तथा दादी मनोहर इन्द्रा जी के साथ खड़े हैं।

पोखरा (नेपाल) - ५३वीं शिवरात्रि पर शिव-ध्वजारोहण करते हुए भ्राता सूर्य बहादुर, प्रधान पंच।

लुधियाना स्वामी जगदानन्द जी को ईश्वरीय सौगात देते हुए ब्र० कु० सरस बहन।

संघी - महाशिवरात्रि पर्व पर आयोजित आध्यात्मिक प्रदर्शनी में भ्राता रामानन्द जी, एस० डी० एम० (सिविल) को चित्रों की व्याख्या देती हुई ब्र० कु० निर्मला बहन।

अम्बाला - शिवरात्रि पर्व पर आयोजित आध्यात्मिक समारोह में मंच पर विराजमान हैं भ्राता एच० पी० चौधरी, प्रशासक, नगरपालिका, ब्र० कु० कृष्णा तथा अन्य।

दिल्ली (मजलिस पार्क) - शिवरात्रि पर्व पर आयोजित झांकी का दृश्य।

बड़ौदा में शिवजयन्ती के आध्यात्मिक कार्यक्रम में प्रवचन करती हुई ब्र० कु० राज बहन।

भुवनेश्वर - आध्यात्मिक प्रदर्शनी का उद्घाटन दृश्य। चित्र में भ्राता जी. मोहन कुमार आई. ए० एस०, भ्राता राजेन्द्र प्रसाद सतपथी, ब्र० कु० सन्देशी, विजय तथा अन्य दिखाई दे रहे हैं।

नौएडा में आयोजित आध्यात्मिक समारोह में मंच पर उपस्थित हैं डा. ए० पी० जैन, ब्र० कु० शील बहन तथा अन्य।

पानीपत - शिवरात्रि पर्व पर भ्राता महेन्द्र कुमार जी को ईश्वरीय सौगात देती हुई ब्र० कु० सरला बहन।

हापुड़ में शिवरात्रि महोत्सव में भ्राता हरिओम गुप्ता जी ईश्वरीय सौगात भेंट करते हुए ब्र. कु. उर्मिल तथा नीतू बहन।

थाना चेकनाका में आयोजित आध्यात्मिक प्रदर्शनी का उद्घाटन करते हुए भ्राता शमी डीसोजा, एम० एल० ए०

लातूर में शिवजयन्ती महोत्सव में भाषण करते हुए भ्राता देशमुख जी, उप जिलाधीश।

गुडीवाड़ा में आध्यात्मिक प्रदर्शनी का उद्घाटन करते हुए भ्राता लक्ष्मण राव, वरिष्ठ वकील।

भोपाल - शिवरात्रि के अवसर पर आयोजित आध्यात्मिक प्रदर्शनी का उद्घाटन करते हुए भ्राता हसमत राय जी। साथ में ब्र० कु० नीता तथा अन्य खड़े हैं।

फिरोजपुर - शिवरात्रि पर्व पर सजाई गई झांकी का अनावरण करते हुए उमेश शर्मा।

सम्बलपुर - पुलिस क्लब में आयोजित एक आध्यात्मिक समारोह में भ्राता बी० पी० शाह, डी० आई० जी० (पुलिस) अपने विचार व्यक्त करते हुए।

रायपुर में आयोजित साप्ताहिक कार्यक्रम 'ज्ञान अन्जलि' में भाषण करते हुए भ्राता गंगाराम शर्मा अध्यक्ष, रायपुर विकास प्राधिकरण।

कल्याण - महाशिवरात्रि पर्व पर नगर में निकाली गई शोभा यात्रा का एक दृश्य

आदिपुर - महाशिवरात्रि पर्व पर शिवध्वजारोहण 'पद्मश्री' भ्राता हंदुराज दुखायल जी ने किया। तत्पश्चात् सभी शिव परमात्मा की स्मृति में खड़े हैं।

ग्वालियर - शिवरात्रि पर्व पर आयोजित शिवदर्शन प्रदर्शनी का उद्‌घाटन करते हुए महेश मुद्‌गल जी।

अमृतसर में आयोजित एक आध्यात्मिक समारोह में प्रवचन करते हुए ब्र० कु० मनोहर इन्द्रा।

होशियारपुर - शिवरात्रि पर्व पर सजाई गई मनोरम झांकी।

दावणगिरि में आयोजित प्रतियोगिता में विजेता बच्चों को शील्ड प्रदान करती हुई ब्र० कु० कलावती।

दिल्ली (कालकाजी) शिवरात्रि पर्व पर शिवध्वजारोहण करने के पश्चात् ब्र० कु० उषा बहन से ईश्वरीय सौगात लेते हुए भ्राता बिहारीलाल जी, अध्यक्ष, सनातन धर्म महासभा।

आर्वी - महाशिवरात्रि पर्व पर आयोजित समारोह में मंच पर उपस्थित हैं न्यायाधीश कोतवाल साहब तथा अन्य।

बम्बई (बोरीवली) शिवरात्रि के अवसर पर प्रदर्शनी में शिव का परिचय देती हुई ब्र० कु० बहिन

भोपाल - राजयोग भवन के वार्षिकोत्सव पर आयोजित समारोह का उद्‌घाटन करते हुए भ्राता राजेन्द्र शर्मा, प्रधान सम्पादक, 'स्वदेश'।

लखनऊ में महाशिवरात्रि पर्व पर निकाली गई शोभा-यात्रा का दृश्य।

जगरावां - शिवरात्रि पर्व पर शिवध्वजारोहण के पश्चात् एस० डी० एस० जगरावां ब्र० कु० बहनों के साथ प्रसन्न मुद्रा में खड़े हैं।

दिल्ली (पश्चिमीविहार) शिवरात्रि के उपलक्ष्य में आयोजित त्रि दिवसीय 'आध्यात्मिक प्रदर्शनी' का उद्घाटन करते हुए भ्राता भौरी लाल शर्मा, नगर निगम सदस्य।

राजकोट - शिवरात्रि पर्व पर शिवध्वजारोहण करते हुए महंत श्री शाश्वतानंदपुरी जी।

पालवल - आध्यात्मिक प्रदर्शनी का उद्घाटन करते हुए नगर पार्षद भ्राता हरेन्द्र पाली जी।

शिवरात्रि उत्सव पर शिवध्वजारोहण के पश्चात् भ्राता बी० के० त्रिपाठी, एस० डी० अन्य शिव स्मृति में खड़े हैं।

शुजालपुर मण्डी में 'सर्व के सहयोग से सुखमय संसार' कार्यक्रम में प्रवचन करती हुई ब्र० कु० आरती बहिन

दिल्ली (शालीमार बाग) में आयोजित समारोह में भाषण करते हुए ब्र० कु० सत्यनारायण जी।

सहज राजयोगाभ्यास द्वारा अपराधों में कमी

डॉ० ब्र. कु. गिरीश पटेल, बम्बई

सर्व प्रथम हम इस बात की चर्चा करेंगे कि अपराध क्यों होते हैं? इस संदर्भ में कई सिद्धान्त प्रतिपादित किये गये हैं। सिगमण्ड फ्रॉयड ने कहा है कि अपराधों का मूल कारण हमारी आंतरिक प्रवृत्तियां हैं। हमारे मनः कायिक आचरण ईड (ID), ईगो (Ego) एवं सुपर ईगो (Super Ego) द्वारा नियंत्रित कहे गये हैं। इन तीनों वर्गों के अन्तर्गत व्यक्ति का बचपन, उसकी किशोरावस्था तथा उसकी परिपक्व प्रौढ़ावस्था के आवरण परिभाषित किये जाते रहे हैं।

जब हम किशोर होते हैं तब हमारी समझ में सच एवं झूठ का अंतर आता है तथा हम तर्क द्वारा अपनी अनुभूतियों को व्यक्त करने की इच्छा करते हैं। हमारा प्रौढ़ अभिभावक मन सामाजिक नियमों की प्रतिबद्धता स्वीकार करने लगता है तथा उचित-अनुचित के, कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य के ज्ञान से वह अपनी तथा अपने अधीनस्थ पुत्रादि की क्रियाओं को भी नियंत्रित करने की कोशिश करने लगता है।

सुपर ईगो (Super Ego) व्यक्ति का जितना सशक्त होगा उतना वह ईड (ID) को नियंत्रित करेगा। अपराधों के विषय में यह माना जाता है कि जिसका सुपर ईगो कमजोर होता है, वह ईड को नियंत्रित नहीं कर पाता है क्योंकि ईड वह प्रवृत्ति है जहाँ उचित-अनुचित का विवेक नहीं रहता। कमजोर प्रवृत्ति का व्यक्ति अपराध कर बैठता है क्योंकि वह ईड को नियंत्रित नहीं कर पाता है। बालक, किशोर एवं अभिभावन तत्व मानव प्रवृत्ति के अंग हैं।

कोई व्यक्ति नहीं चाहता कि समाज में अपराध हों। हम सभी अपराधों से मुक्त समाज की कल्पना करते हैं। परन्तु मानसिक विकृतियों के कारण देह के प्रति अभिमान युक्त होते हुए हम अपनी आवश्यकताओं को भी सन्तुष्ट करते गये। हमारी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति के संदर्भ में हमारी प्रवृतियां परिभाषित होती रही हैं। जैसे—भोजन, कपड़ा, मकान आदि की आवश्यकता। **इसी प्रकार हमारी मानसिक आवश्यकतायें भी हैं। जैसे—हम सब चाहते हैं कि हमें शान्ति मिले, प्रेम मिले, सुख मिले। जब प्रारम्भ में समस्त आत्मायें सृष्टि रूपी रंगमंच पर अवतरित हुई तो मानव मन की यही अवधारणा थी कि मैं एक आत्मा हूं और शरीर तो मेरा वस्त्र है और इसी आत्मचेतना के साथ, अनुभव के साथ जुड़ते गये शान्ति, प्रेम तथा आनन्द के सूत्र। क्योंकि ये सभी आत्मा के निजि गुण हैं और इनका अनुभव सभी मानसिक विकृतियों को नष्ट कर देता है।**

स्मृति के सहारे हम इन आत्मिक गुणों को पल्लवित कर सकते हैं परन्तु इनकी विस्मृति विकृति को जन्म देती है। बहुत दिनों तक व्यक्ति से न मिलने पर हम उसे भूलने लगते हैं। यह विस्मृति इस कारण है कि हमने उसे याद करने का प्रयास नहीं किया। इसी प्रकार, हम आत्मा हैं—यह स्मृति किसी ने नहीं दिलाई। अतः हम आत्मचेतना के प्रति भी तटस्थ होते गये और कालान्तर में यदि स्मृति आई भी तो उस शरीर की जो आत्मा नहीं है। इस शरीर को आत्मा मान लेने से विकृतियां पैदा हुई, भ्रम तथा भय का जन्म हुआ। जो भी हमारे शरीर से सम्बन्धित बाते हैं उसी से हमारी चेतना बनती गयी तथा शान्ति, सुख और प्रेम शारीरिक आवश्यकता होने के कारण हमारी मनोवैज्ञानिक अपेक्षायें बन गई। मानव मन को यह तो याद है कि शान्ति, सुख और प्रेम आत्मा के धर्म हैं परन्तु यह स्वयं को शरीर मानते हुए शरीर से इन बातों को प्राप्त करने की इच्छा करने लगा।

सुख का अनुभव भौतिक पदार्थों द्वारा ही संभव है। मैं जितना अच्छा खाऊँगा, वही मेरे लिए सुख है। जितना अधिक धन होगा वही मेरे लिए सुख होगा। वह कालान्तर में आत्म-विस्मृतिजन्य विकृतियों के फलीभूत देह के सम्बन्धों से स्नेह पाने की चेष्टा करने लगा। जब ये इच्छा प्रबल हुई कि धन मेरे पास अधिक हो तो लोभ की प्रवृत्ति का निर्माण होने लगा। उसी प्रकार जब ये भाव आया कि मैं बड़ा हूं, अगर किसी को दबाऊँगा तो बड़ा माना जाऊँगा तो क्रोध भी आया। मुझे माता से स्नेह है और ये भाव आते ही कि माता से मुझे जुदा होना होगा तो आसक्ति का निर्माण हुआ। ये सब विकृतियां हैं। अतः इनसे मानसिक तनाव उत्पन्न होता है। उद्वेग के बढ़ने से भय का निर्माण होता है। अपराध एक ऐसा मनोभाव है जिसके करने के बाद ही व्यक्ति को सन्तोष होने लगता है।

अब विचार यह करना है कि अपराध के पीछे जो मनोविकार हैं उसे कैसे समाप्त किया जावे? सरकार तथा हर व्यक्ति यहाँ तक कि अपराधी भी यही चाहता है कि अपराध कम हों और समाज में अपराध की भावना कम हो। अब प्रश्न यह उठता है कि उसे कम कैसे करें अथवा मुक्त कैसे हों? आज तक की अपराध नियन्त्रण पद्धति में यह तथ्य प्रमुखता से सामने आया है कि हम अपराधी को सजा देते

हैं और उसके पीछे भाव यह है कि जिस व्यक्ति को सजा मिलती है वह यह अनुभव करने लगता है कि जो कुछ उसने किया वह गलत किया है और उसे दुबारा नहीं करना चाहिये। दण्ड से जो भय उत्पन्न हुआ उसने भी अपराधी के मन में यह बात उत्पन्न की कि यदि वह अपराध करेगा तो उसे पुनः दण्ड भोगना पड़ेगा। परन्तु **भय एक कमजोर प्रेरक तत्व है। भय से किसी कार्य को न करने की प्रेरणा बहुत कमजोर शक्ति है। अतः मनोविज्ञान इस प्रेरक तत्व के प्रति आशावादी नहीं। डर द्वारा अपराधों की कमी का दावा स्थाई नहीं बन सकता। इसलिये आवश्यकता इस बात की है कि हम आंतरिक प्रेरक तत्वों का निर्माण करें जिससे मन एवं बुद्धि नित्य शान्ति एवं आनन्द में विचरण कर सके।**

योग के अभ्यास से ये आंतरिक प्रेरणायें विकसित होती हैं। अपराधों की मूल प्रवृत्ति इसी योगाभ्यास से समाप्त होती है क्योंकि राजयोग का अभ्यास अपराधों के मूल पर ही प्रहार करता है। हमें अनुभूति होती है कि यह जो आत्मा है, वही मैं हूं, मैं आत्मा प्रेमस्वरूप हूँ, शान्तिस्वरूप हूँ, सुखस्वरूप हूँ– इन तीनों मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं के सहारे जब स्वयं को आत्मिक स्मृति में रखकर हम संतुष्ट होने लगे और ठीक इसके विपरीत जब हमारी ये चेतना बनने लगी कि हम शरीर हैं तो मनुष्य देह के सम्बन्धों से सन्तुष्ट होता हुआ विकृतियों का केन्द्र बन गया।

राजयोग के द्वारा मूलभूत स्थिति का शान्तिमय निर्माण होता है कि आप एक आत्मा हैं। जब हमें स्मृति मिलती है तो हम आत्मिक सुख एवं शान्ति का अनुभव करने लगते हैं तथा विस्मृति द्वारा हम समस्याओं में उलझ जाते हैं। राजयोग की इस सतत आभ्यासिक प्रक्रिया से लाभ यह होता है कि हमें अपनी मनोवृत्तियों को दबाना नहीं पड़ता तथा हमें आत्मिक शान्ति एवं सन्तुष्टि स्वाभाविक रूप से मिल जाती है। जैसे–जब शान्त होते हैं तो हम क्रोध नहीं करते हैं परन्तु अशान्त एवं अस्वस्थता में क्रोध का निर्माण होता है तथा जरा-जरा सी घटनाओं में हम चिड़चिड़े हो जाते हैं। जितना-जितना हम आन्तरिक रूप से स्वस्थ हैं, उतना-उतना ही हम परमशान्तिमय आत्मा के निकट हैं। इस प्रकार की आत्म चेतना के बढ़ते रहते समाज में अपराधों की कमी का दावा किया जा सकता है।

अपराधों में कमी का एक और तरीका हो सकता है जिसे हम लोक शिक्षण एवं लोक जागृति कह सकते हैं। अर्थात् अपराधों के विरूद्ध व्यक्तियों को शिक्षित करना चाहिये, उससे अपराधों में कमी की जा सकती है। चंबल की घाटी के भूतपूर्व खूंखार डाकू पंचम सिंह ने जयप्रकाश नारायण जी के कहने पर अपने हथियार सरकार को सौंप दिये थे। जब पंचम सिंह जेल में थे तब उन्हें राजयोग की शिक्षा दी गयी। **पंचम सिंह ने बताया कि वे जन्म से डाकू नहीं थे परन्तु परिस्थितियों ने उन्हें डाकू बनाया था। अपराधों के विरूद्ध योग-शिक्षा ने पंचम सिंह के मन में बैर की भावना को समाप्त किया तथा अपने विरोधी परिवारों के सम्मुख खड़े होकर उन्होंने कहा कि उन्हें मार देने से यदि विरोधियों की भावनायें शान्त हो जायें अथवा बैर ही सदा के लिए समाप्त हो जाये तो वे मरने के लिए तैयार हैं।**

पंचम सिंह ने बताया कि राजयोग के सतत अभ्यास से बैरियों से बदला लेने की दुर्भावना उसके मन से पूर्ण रूप से निर्मूल हो चुकी थी। पंचम सिंह के मन में शान्ति एवं परमात्मा की स्मृति ने उन्हें सच्चा मनुष्य बना दिया। यह एक महत्वपूर्ण परिवर्तन है। सरकार को भी अपराधियों को योग की बात सिखानी चाहिये।

अपराधी मनोवृत्ति को जिसे अपराधी व्यक्त नहीं कर पाता, दबा देने के कारण भयंकर परिणाम निकलते हैं क्योंकि प्रत्येक मनोवृत्ति एक शक्ति है जिन्हें नियोजित करने के लिए चार तरीके हो सकते हैं (१) सप्रेशन (suppression) (२) रिप्रशन (३) ट्रांसफारमेशन (४) सब्लीमेशन । ट्रांसफारमेशन द्वारा अर्थात् बच्चे के अन्दर लोभ की वृत्ति को टिकट संग्रह आदि की आदत द्वारा संतुष्ट करते हुए, सुधारा जा सकता है। सबलीमेशन सबसे स्वस्थ तरीका है, जिससे मनोवृत्तियों में स्वास्थ्यप्रद सुधार संभव है। पानी को बर्फ बनाने की जो रूपांतरित क्रिया है उसी प्रकार का यह सबलीमेशन प्रोसेस (Process) है। इसके द्वारा नकारात्मक मनोवृत्तियां स्वयं ही महत्वहीन होती हुई नष्ट हो जाती है। योग का अभ्यास अर्थात् यह विचार कि मैं शान्तिस्वरूप आत्मा हूँ, जीव को परम सन्तुष्टि प्रदान करता है। इससे विरोधी भावों एवं तनावों से मुकाबला करने की शक्ति बढ़ती है।

'योग' शब्द संस्कृत से लिया गया है जिसका अर्थ है सम्बन्ध अर्थात् आत्मा का परमपिता परमात्मा से संबंध है। ध्यान की प्रक्रिया में दैनिक कार्य करते हुए भी मनुष्य अपनी चेतना को परमात्मा के साथ जोड़े रह सकता है। राजयोग द्वारा हमें काम करते हुए भी परमात्मा को याद करना है। इससे दो विशेष लाभ प्रकट होते हैं और वे हैं हमारे लोक व्यवहार में मूल्य पद्धति का विकास अर्थात् अपनी विकृतियों पर मन, वचन और कर्म से विजय प्राप्त करना अर्थात् क्रोध, लोभ, मोह आदि को वश में करके पुरुषार्थ

शेष पृष्ठ २५ पर

'कहानी एक भटके हुए राही की'

ब्र० कु० रामरत्न, करनाल

मैं अक्सर सोचा करता था कि जीवन एक संग्राम है जिसमें संघर्ष ही संघर्ष है। परन्तु जब परम पिता परमात्मा से ज्ञान का तीसरा नेत्र मिला तो अनुभव हुआ कि जीवन एक संग्राम नहीं अपितु हर मनुष्यात्मा एक्टर समान सृष्टि रंगमंच पर पार्ट अदा कर रहा है।

मेरे जीवन में इतना अंधकार था कि उस अंधकार के अलावा मुझे कुछ भी दिखाई नहीं देता था। अंधियारे पथ पर मैं बेखबर भटक रहा था। सोच लिया था कि अब तो जेल के सींखचों में ही मेरी जिंदगी का अन्त होगा। बस, कुछ ऐसी अज्ञानता-वश अपनी जिंदगी से हार स्वीकार कर ली थी। कहीं भी तो आशा की किरण नहीं दिखाई दे रही थी जो मुझे विश्वास दिला सके।

अचानक ही मेरी जिंदगी में एक सुनहरा क्षण भी आया, जब मुझे ऐसा महसूस हुआ कि भगवान् के घर देर हो सकती है लेकिन अन्धेर नहीं। जब इन्सान के सभी सहारे छूट जाते हैं तब एक ही सच्चा सहारा बच जाता है और वो है भगवान्। कुछ ऐसी ही घटना मेरे साथ भी घटी।

बात सन् १९८६ की है। तब मै एफ० सी० आई० मज़दूर यूनियन का नेता था। मेरे से ऊपर वाले राष्ट्रीय स्तर के नेता अक्सर मेरे से नाराज़ रहते थे क्योंकि वे चाहते थे कि मैं हेराफेरी कर के खुद भी मज़दूर भाईयों का पैसा खाऊँ तथा उन्हें भी खिलाऊँ। परन्तु इस गलत कार्य में साथ न देने के कारण उन्होंने मुझे झूठी चाल में फंसा दिया यानि कत्ल के इल्ज़ाम में मुझे मुजरिम घोषित कर दिया गया। एक साल तो मैं स्वयं को कानून की नज़रों से छिपाये रखने के प्रयत्न में रहा। आखिर छिप-छिप कर कब तक जिंदगी काटता। ऐसे तो जिंदगी मेरे लिये बोझ बन गई। मैंने गुप्त रूप से सच्चे सबूत ढूंढने की कोशिश की। लेकिन नाकामयाब रहा क्योंकि आज की दुनिया में पैसा ही इन्सान को खरीद सकता है। जब सब तरफ से निराशा ही हाथ लगी तो थक कर मन में फैसला कर लिया कि यूं ही अगर छिप-छिप कर जीना है तो क्यों न स्वयं को कानून के हवाले कर दूं। मैंने स्वयं को कानून के हवाले कर दिया और इस तरह से मैं जेल में एक आजीवन कारावास का कैदी कहलाने लगा।

जेल में भी अपनी बुराइयों से छूट नहीं पाया था। शराब, सिग्रेट, माँस यानि तामसिक भोजन मेरे लिये जिन्दगी का हिस्सा बन गया था। मज़दूर नेता होने के कारण मुझमें दादागिरी के संस्कार भी बहुत थे। मज़दूरों की सभा में सरकार के खिलाफ भड़कीले भाषण देने की आदत- सी बन गई थी। लेकिन मैं जेल में भी महाभारत, रामायण तथा अन्य धार्मिक पुस्तकों का अध्ययन किया करता था परन्तु फिर भी असन्तुष्ट रहता था। भक्ति करते हुए भी मन खाली खाली -सा रहता था। आत्मा की प्यास दिनप्रतिदिन बढ़ती जा रही थी।

अकस्मात् जेल में लगभग ढ़ाई मास पश्चात् ब्रह्माकुमारी आश्रम से भाई-बहिनें आध्यात्मिक ज्ञान देने हेतु पधारे। एक सप्ताह बाद ब्र० कु० भाई-बहिनों का तीन-चार बार प्रवचन सुनने से ही अति आनन्द का अनुभव हुआ। जो जीवन सारा दिन मानसिक तनाव में उलझा रहता था, सच्चे ज्ञान को पाकर जैसे बुद्धि का ताला खुलता गया। धीरे-धीरे मैंने ईश्वरीय साहित्य पढ़ना शुरू किया तथा राजयोग का अभ्यास भी करने लगा जिससे सचमुच जीवन में एक अनोखा परिवर्तन आने लगा। दिनप्रतिदिन प्रभु-मिलन के अनोखे अनुभव होने लगे। मन में ज्ञान-योग की असीम मस्ती-सी रहने लगी। जो जिन्दगी दिशाहीन, लक्ष्यहीन थी उसे अपनी मंज़िल नज़र आने लगी। जीवन जो नीरस बन गया था अब उसमें खुशियों के फूल महकने लगे जिससे बुराइयों से बोझिल आत्मा हल्की होने लगी। अशुद्ध खानपान स्वतः ही छूटने लगा जिस पर मेरा जेल में भी ४००/- रू० तथा बाहर १०००/- रू० से भी अधिक माहवार खर्च होता था।

मेरे में इस अनोखे परिवर्तन को देख सभी कैदी तथा अन्य जेल के कर्मचारी बहुत प्रभावित थे। धीरे-धीरे मेरे अन्दर आत्मा की शक्तियाँ जो बरसों से सोई पड़ी थीं, जाग उठीं। राजयोग के नित्यप्रति अभ्यास से मैंने अपनी आत्मा को शक्तिशाली बनाया। तो एक दिन जो जिन्दगी में सभी जीने की इच्छाएं मर चुकी थीं अब प्रभु-प्रेम पाकर जीने की लालसा पैदा हो गई है। गहराई से सोचा कि जब मैंने कोई कत्ल नहीं किया

फिर मैं बेगुनाह होते हुए क्यों जिन्दगी को नष्ट होता देखूँ। मैंने भगवान् को याद कर अपने केस की अपील हाई कोर्ट में कर दी जिससे सच्चाई स्वतः ही मददगार बन गई। मैं सोच भी नहीं सकता था कि हारा हुआ केस दोबारा भी जीत सकता हूँ। यह परमात्मा की शक्ति का ही कमाल था जो गुप्त रूप से मेरा साथ दे रही थी और मैं चन्द महीनों में ही जेल से बरी हो गया। बाहर आने पर हजारों मजदूरों को मेरे जीवन के इस अद्भुत परिवर्तन को देख अचम्भा लगने लगा। मैंने उनको ज्ञान-योग का पथ दर्शाने का प्रयत्न किया तथा भिन्न-२ समयानुसार सभी को ईश्वरीय सेवाकेन्द्र पर लाता रहता हूँ। अनोखे परिवर्तन एवं ईश्वरीय ज्ञान को सुन १०३ मजदूर भाई-बहनों ने आजीवन बीड़ी, सिग्रेट, शराब, गाँजा, अफीम आदि का त्याग कर दिया तथा लगभग १५ मज़दूर भाई-बहनों ने अपने जीवन को मेरे समान पवित्र योगी जीवन बनाने का संकल्प लिया जो कि प्रतिदिन सेवाकेन्द्र पर प्रातः- सांय क्लास करते हैं तथा वे भी अपने सम्पर्कमें आने वाली आत्माओं को भी सन्मार्ग बताते हैं। ये किसकी कमाल कहें? वो कौन हो सकता है? वे हैं एक परमपिता परमात्मा शिव जो हम सभी आत्माओं का पिता है। अन्त में उस परमपिता, परमशिक्षक, परमसद्गुरू, परम रक्षक की महिमा में दो पंक्तियाँ —

"तुम आ गये हो तो नूर आ गया है,
नहीं तो चिरागों से लौ जा रही थी
जीने की तुमसे वजह मिल गई है
बेवजह ये जिन्दगी जा रही थी।

"हमने देखा है यूं"

चली जाए लगाम ढीली अश्व के चरणों में जब राही के हाथों के बदले,
चिपक जाया करते रथी रथ से ऐसे में, मार्ग पे चलते-चलते;
हो जाया करती चक्रवात आत्माएँ तब चक्रवर्ती बनते-बनते।
बढ़ने लगती तीव्रता से व्यर्थ की ओर, समर्थ पे बढ़ते-बढ़ते।।

लग जाए घोड़ा बुद्धि का जब पिछाड़ी में गाड़ी के अगाड़ी के बदले,
समझते पुरुषार्थी स्व की उन्नति, दिशा विपरीत गमन करते-करते;
बन जाया करते अकर्मण्य, सिमर के ड्रामा को पुरुषार्थ के भी पहले।
सांझ ढले की परछाई सम, लम्बी बातों के पुल उनको खुश करते।।

देने लगें चुनौती जब आत्माएँ श्रीमत को मनमत के बल पर,
बाहर साइलेंन्स अन्दर द्वन्द्व होता विकर्षण दिव्य आकर्षण के बदले,
हो जाया करतीं वंचित ईश्वरीय सुखों से आत्माएँ, एकान्त को रटते-रटते।
साधारणता से भी हट जाती आत्माएँ, विशेष बनते-बनते।।

लेने लगें आत्माएँ जब 'गाइडैन्स', 'कोटेशन', 'करैक्शन'— यहां-वहां से,
जुट जाया करते कनैक्शन अनजाने में जाने कहां-कहां से,
हो जाया करतीं 'मिस-गाइड' आत्माएँ तब गाइड बनते-बनते।
बह जाया करता तन-मन-धन व्यर्थ में सब समर्थ पे लगते-लगते।।

उल्टे प्रयोगों में जीवन प्रयुक्त होने से पहले,
भविष्य का आधार वर्तमान बिगड़ने से पहले,
हे आत्मन्! जीवन सुखमय तत्काल बनाएँ।
सुनना है तो बस सिर्फ शिव बाप से —नीति ऐसी अपनाएँ।।

करके बुद्धि अर्पण, मन दर्पण जो कायदों पे चलते।
बन जाया करते फरिश्ता बाप के संग के रंग में रंगते-रंगते।।

ब्र० कु० राजकुमारी, मजलिस पार्क, देहली

महु में आयोजित विश्वशान्ति समारोह में अपने उदगार प्रकट करते हुए मेजर जनरल एच० पी० पाठक जी।

"पुरुषार्थ की राहें"

जीवन का वह सत्य है 'पुरुषार्थ', जिससे कैसी भी निर्बल आत्मा बलवान बन जाती है, कितना भी निराश मनुष्य आशाओं के चिराग जला लेता है।

पुरुषार्थ और हमारा निश्चय

हमें दृढ़ निश्चय है कि काल-चक्र के इतिहास की ये सबसे सुन्दर बेला है। प्रभुमिलन की यही घड़ी है, ईश्वरीय वरदान पाने का अनमोल समय यही है...साथ-साथ ये भी हमारी अटूट धारणा है कि यही विश्व परिवर्तन का सुनहरा अवसर है। इसलिये हमें ही स्व-परिवर्तन की बुनियाद पर इस विश्व को बेहतर बनाना है,सर्व के सहयोग से और अपने पुरुषार्थ से...

पुरुषार्थ और श्रीमत

हमें अब कुछ नहीं चाहिए। बाबा मिला है, सब कुछ मिल गया है...परन्तु इसका मतलब ये नहीं हमें श्रीमत भी नहीं चाहिए...हमारे पुरुषार्थ का आधार है ईश्वरीय मत। यही हमारी राहें हैं, यही हमारा खजाना है, यही हमारा जीवन है। रोज श्रीमत देकर ही तो परमात्मा हमें श्रेष्ठ बना रहे हैं...परमात्मा का श्रीमत देना ही तो हमारे प्रति सच्चा प्यार है।

अब आवश्यकता इस बात की है जितना श्रेष्ठ पथ हमने चुना है त्याग और तपस्या का, सुख-शान्ति और पवित्रता का...क्या उतना ही श्रेष्ठ पद पाने का हमारा पुरुषार्थ है? हमारी मंज़िल, हमारा सम्पूर्ण लक्ष्य – जहां ब्रह्मा बाप समान बनने का है, वहां पुरुषार्थ भी आवश्यक है। ज्ञान हमें इतना समझदार बना दे कि पुरुषार्थ की राहों पर कहीं भी अज्ञान का अंधेरा न रह जाये...पुरुषार्थी जीवन का सबसे प्रिय विषय 'राजयोग' हमें इतनी ऊँचाइयों पर पहुंचा दे कि ये मधुर-मिलन सदा होता रहे। मेहमान बनकर ही नीचे आना होवे...। सेवायें खेल बन जायें, धारणायें धर्म बन जाये तो पुरुषार्थ की राहें वृक्षपति की दशायें बन जायेंगी।

पुरुषार्थ और कर्म

पुरुषार्थ का सबसे अधिक सम्बन्ध कर्मों से ही है और कर्म ही किसी व्यक्ति को महान् बनाते हैं। श्रेष्ठ कर्मों का सम्बन्ध जबकि हमारे ही श्रेष्ठ विचारों से, पवित्र विचारों से जुड़ा हुआ है...तो हमारा पुरुषार्थ सबसे पहले यही है कि हम अपने

ब्र० कु० सूरजमुखी ,रुद्रपुर

विचारों को श्रेष्ठ बनायें। जिसके लिये ही परमात्मा हमें 'श्रीमत' देकर सृष्टि के आदि, मध्य, अन्त का राज सुनाते आ रहे हैं।

जैसे ही हमें समय की रफ्तार को देखकर, पुरुषार्थ की रफ्तार भी बढ़ाने की प्रेरणा मिलती है...साथ-साथ संकल्पों की गति धीमी होने लगती है। क्योंकि तब हमें एक ही संकल्प रह जाता है -हम सम्पूर्ण बनकर घर जा रहे हैं या परमात्मा हमें आप-समान बनाकर घर ले जा रहे हैं।

पुरुषार्थ और संयम

एक सच्चे पुरुषार्थी के लिये, एक योगी आत्मा के लिये संयम और नियम की अति आवश्यकता है। मन की शीतलता, बुद्धि की एकाग्रता, स्वभाव-संस्कार की सरलता यहां अपना विशेष महत्व रखती है। इसे ही जीवन का संयम कहेंगे। यदि संयम जीवन का भार बन जाये तो पुरुषार्थ की बुनियाद ढह जायेगी। जिसका कारण कोई न कोई अपवित्रता ही सिद्ध होगी।

आज के मानव का पुरुषार्थ

प्रचण्ड भौतिक विज्ञान धारा में बहता हुआ आज का मनुष्य भले ही अपने को तैराक समझता हो और असीमित आकाश में विमानों की सैर को अपना लक्ष्य मानता हो परन्तु चन्द्रमा पर पहुंच कर भी उसे तृप्ति नहीं।

जब झूठी तृष्णाओं में, कल्पनाओं में मन भटकने लगता है तो विवेक पहले ही नष्ट होने लगता है। परिणामस्वरूप अशान्ति बढ़ती है, तनाव बढ़ता है, क्रोध बढ़ता है और अन्य विकार भी। जिनसे मुक्त होने के चक्कर में फिर नशीले पदार्थों का सेवन बढ़ता है। झूठी शान बढ़ाने के लिये अपनी कमियों को छुपाने का झूठा अहंकार बढ़ता है। तब चाहिए कोई सच्चा मार्ग दर्शक, सच्चा हितैषी। वह भला कौन होगा? परमपिता परमात्मा शिव जो इन सब से परे उपराम हैं।

सच्चे ईश्वरीय ज्ञान को पाकर हमें पता चला है कि भौतिक सुखों के साधनों को जुटाकर शान्ति भंग हो जाती है क्योंकि उनसे भी एक दिन मनुष्य ऊब जाता है और परिवर्तन की चाह, नित्य नये अविष्कारों की आवश्यकता, देखा-देखी की होड़ में ही वह इच्छाओं का गुलाम बन जाता है, साथ-साथ आदतों से मजबूर हो जाता है।

सच्चा सुख और उसका आधार

सच्चा सुख और शान्ति तो हमारे ही मन बुद्धि पर आधारित है..। यद्यपि कोई संगीत कितना भी सुमधुर हो, गीत कितना भी प्रिय हो, साधन कितने भी पर्याप्त हों, परन्तु चौबिसों घण्टे वही धुन, वही राग, वही स्वर सुनते-सुनते भी तो मनुष्य

ऊब ही जायेगा। फिर उसे मित्र सम्बन्धी या रंग-बिरंगी दुनियाँ की ही याद आयेगी। परन्तु ये आँखें सदा ही किसी के संग के रंग पे नहीं टिक सकती हैं। दोनों ही अस्थिर हैं। रंगों का आक्रमण जब सहन नहीं कर पायेंगी तब उन्हें चाहिए दो घड़ी बन्द पलकों का आधार। आराम के लिये हर व्यक्ति ही आँखे बन्द करना चाहता है।

ऐसे ही एक दिन ऐसा भी आता है कि मनुष्य, मनुष्य से ऊब जाता है। धन्धों से ऊब जाता है। परन्तु इतना ही नहीं, खुद से खुद परेशान होकर मनुष्य सम्बन्धों का भी त्याग कर बैठता है परन्तु परेशानियों का नहीं। और परेशानियों का मूल कारण अपने ही मन की कमजोरी हैं जिनका त्याग वह नहीं कर पाता। उसके लिये चाहिए मनोबल, योगबल जिनका आधार है 'पुरुषार्थ' और 'दृढ़ संकल्प'।

पुरुषार्थ की राहें

जिन्हें एक बार भगवान् की सत्य पहचान मिल जाये और स्वयं का यथार्थ ज्ञान...जिन्हें जीवन में कुछ कर दिखाने का संकल्प है, जिनके इरादे ऊँचे हैं, लक्ष्य महान् है और भाग्य भी स्पष्ट है जिनका, उन्हीं के पुरुषार्थ की ये राहें हैं—

* उनका सम्पूर्ण प्यार एक परमात्मा से होगा। सर्व सम्बन्धों का सुख एक बाप से लेकर उनका मन तृप्त होगा।

* उनके सामने हर बात स्पष्ट होगी...वह खुद से, अपने श्रेष्ठ भाग्य से सन्तुष्ट होगा। उनका हरेक आत्मा से अलौकिक स्नेह होगा।

* जो आत्मा अपने मन, वचन, कर्म से सदा दूसरों को सुख देती है, अवश्य उनकी राहों पर भगवान भी सुखों की वर्षा करते हैं।

* जिनके पास बहुत पुण्य जमा होंगे और संकल्पों की सिद्धि होगी, उनका पुरुषार्थ सफल होगा।

* जिनके कर्म योगयुक्त हों व वचनों से कभी किसी को दुःख न दिया हो, मन में भी अंशभाव अशुभ भाव न हों, वही सच्चा पुरुषार्थी है।

* जिनका लक्ष्य परमात्मा के अहसानों का बदला चुकाने के लिये हर पल आंखों पर होगा। पुरूषार्थ की सफलता के लिए चाहिये सम्पूर्ण पवित्रता – यही व्रत हमारी महानताओं में चार चांद लगा देता है।

* जब अपने अवगुण देखेंगे और गुण दूसरों के देखेंगे तो हम जल्दी-जल्दी गुणवान बन जायेंगे और बाबा के नयनों के नूर। तो अवश्य ही हमारी राहें जगमगा उठेंगी।

संगरूर - भ्राता अमरजीत सिंह, प्राधानाचार्य को ईश्वरीय सौगात देती हुई ब्र० कु० हरजीत बहन।

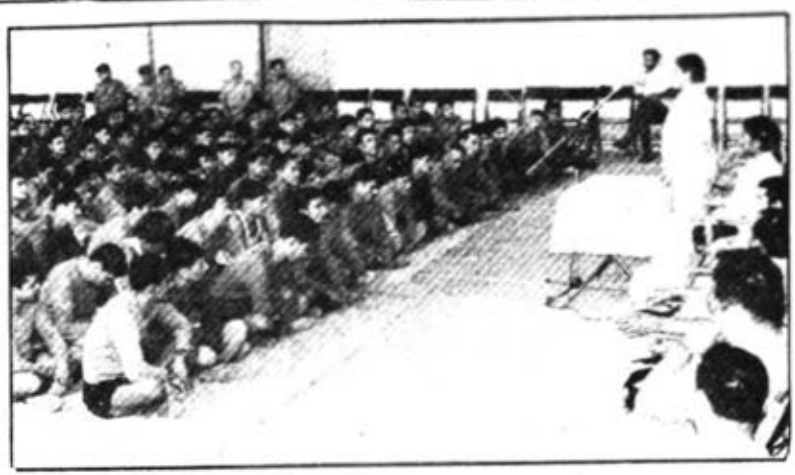

दिल्ली (चांदनी चौक) में संग्रहालय में संसद सदस्य भ्राता जयप्रकाश अग्रवाल जी को चित्रों पर समझाती हुई ब्र. कु. शीला।

झारसुगुडा में पुलिस कर्मचारियों के समक्ष प्रवचन करती हुई ब्र० कु० भारती जी।

स्व-धर्म की शक्ति

कहा जाता है कि 'धर्म में शक्ति है।' किन्तु इसका वास्तविक अर्थ क्या है आज कोई नहीं जानता। लोग समझते हैं कि हिन्दू, मुस्लिम, सिख एवं ईसाई आदि धर्म ही वह धर्म हैं जिनमें शक्ति है तथा अपनी इसी मान्यता के आधार पर इन-इन धर्मों के अनुयायी सदियों से अपनी-अपनी श्रेष्ठता एवं सत्यता के कट्टरपन के आधार से एक दूसरे पर भिन्न-भिन्न प्रकार से अपना धर्म थोपते आये हैं जिनमें हिंसा की विधि भी शामिल है।विश्व का इतिहास इसका पूर्ण साक्षी है।

किन्तु विवेक कहता है कि जो धर्म परस्पर हिंसा, वैमनस्य एवं भेदभाव उत्पन्न करता है वहसच्चा धर्म नहीं हो सकता क्योंकि धर्म का उद्देश्य मानव मात्र का अभ्युदय करना होता है। सच्चा धर्म सत्कर्म की ओर प्रेरित करता है तथा अतीन्द्रिय सुख एवं शांति प्रदान करता है। उससे परस्पर प्रेम, एकता एवं भाईचारे की भावना जागृत होती है। तो प्रश्न उठता है कि वह सत्य धर्म कौनसा है, जिससे हम शक्तिशाली बनते हैं तथा वह सत्यधर्म उपरोक्त धर्मों से किस प्रकार भिन्न है तथा उस सत्य धर्म से हम किस प्रकार शक्तिशाली बनते हैं तथा उसकी शक्ति की अभिव्यक्ति किस प्रकार होती है? सृष्टि के चक्र में मानव कब-२ उस सत्य धर्म को धारण करता है?

उपरोक्त सभी प्रश्नों का सही उत्तर जानन से पूर्व हमें स्वयं (Self) को यथार्थ जानना होगा। गीता के चौथे अध्याय के सातवें श्लोक में दिये गये वचन (यदा-यदा ही धर्मस्य...) के अनुसार निराकार ज्योतिर्बिन्दु स्वरूप परमपिता परमात्मा शिव ने सन् १९३७ में सृष्टि पर साकार में प्रकट होकर अर्थात् एक वृद्ध तन में प्रवेश कर तथा उसे कर्त्तव्यवाचक प्रजापिता ब्रह्मा का नाम देकर अर्थात् उनमें दिव्य अवतरण लेकर, ब्रह्मा-मुख कमल द्वारा हम मनुष्य आत्माओं को बताया है कि हम 'देह' नहीं, चैतन्य शक्ति 'आत्मा' हैं। यह शरीर पांच तत्वों का पुतला है तथा 'जड़' है। 'आत्मा' की तीन शक्तियां हैं-मन, बुद्धि और संस्कार। 'मन' का कार्य सोचना है। 'बुद्धि' का कार्य मन में उठे हुए सही एवं गलत का निर्णय करना है तथा बुद्धि में ही अनुभव एवं स्मृतियां निवास करती हैं। मन में उठे

ब्र० कु० ममता, भरतपुर

संकल्पों तथा बुद्धि द्वारा उन पर किये गये गल्त एवं सही के निर्णयों के फलस्वरूप जो कर्म करते हैं उनका दीर्घ समय में मन और बुद्धि पर पड़ने वाला प्रभाव हमारे 'संस्कार' कहलाते हैं। आत्मा निराकार ज्योतिबिन्दु स्वरूप है तथा सितारे की तरह जगमगाती अलौकिक दिव्य ज्योति है। आत्मा अजर, अमर, अविनाशी है। यह शरीर आत्मा का वस्त्र है तथा विनाशी है। आत्मा इस शरीर रूपी वस्त्र को धारणा कर इस सृष्टि रूपी विशाल नाटक में अपनी भूमिका अदा करती है। आत्मा देह में भृकुटि के बीच निवास कर शरीर की कर्मेन्द्रियों से कर्म कराती है। किन्तु वास्तव में इस तन से न्यारी है। आत्माओं में, जब वे निराकारी अवस्था में होती हैं तो उनमें कोई लिंग-भेद एवं धर्म-भेद नहीं रहता किन्तु वह जिस परिवार में (हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख अथवा ईसाई) तथा जो शरीर (स्त्री अथवा पुरुष का) धारण करती है, उसी के आधार से लिंग-भेद व धर्म भेद में आती है। अतः उपरोक्त धर्म देह के धर्म हैं, आत्मा के नहीं।

आत्मा का अनादि एवं आदि स्वरूप एवं स्वधर्म 'पवित्रता' एवं 'शांति' है। आत्मा अपने मूल घर (शांतिधाम, निर्वाण धाम, परलोक अथवा निराकारी दुनिया) में पूर्णतः पवित्र एवं शांत होती है। यही आत्मा का अनादि स्वरूप कहलाता है। कल्प के प्रारंभ में आत्मा जब साकार मनुष्य लोक में आकर पार्ट बजाने के लिए शरीर धारण करती है तब भी वह सम्पूर्ण सतोप्रधान, पवित्र एवं शांत होती है। यह आत्माओं का आदि स्वरूप कहलाता है। इस अवस्था में वह सर्वगुण एवं सर्व शक्तियों से सम्पन्न होने के कारण सोलह कला सम्पूर्ण कहलाती है। इसके बाद त्रेता की अवधि में आत्मा सतोगुणी, सम्पूर्ण पवित्र एवं शांत अवस्था में होती है। किन्तु सतोप्रधान से सतोगुण हो जाने के कारण गुणों एवं शक्तियों में कुछ कमी आ जाने के फलस्वरूप कलाएँ सोलह से घटकर चौदह हो जाती हैं। इन दोनों युगों की अवधि में हम मनुष्य आत्मायें देही-अभिमानी स्थिति एवं स्वधर्म (पवित्रता एवं शान्ति) में स्थित रहने के कारण मायाजीत, डबल अहिंसक, सर्वगुण सम्पन्न, मर्यादा-पुरुषोत्तम, धर्म-निष्ठ, कर्म-निष्ठ देवी देवता कहलाते हैं तथा स्वास्थ्य, सुख एवं सम्पत्ति (Health, Wealth and Happiness) सम्पन्न दैवी स्वराज्य भोगते हैं तथा उनकी यह धारणा युक्त जीवन पद्धति अथवा अवस्था 'आदि सनातन देवी देवता धर्म' कहलाती है।

किन्तु द्वापर युग से हम मनुष्य आत्माएँ अपने आप को आत्मा न समझकर देह समझने के कारण अर्थात् देह-अभिमान के फलस्वरूप वाम-मार्ग अर्थात् विकारी-

मार्ग पर चले जाते हैं और इसी युग से इब्राहिम द्वारा इस्लाम धर्म, बुद्ध द्वारा बौद्ध धर्म, ईसा मसीह द्वारा ईसाई धर्म की स्थापना होती है तथा इसके बाद अन्य धर्म भी स्थापित होते हैं। हम मनुष्य आत्माएं पुनर्जन्म में आते-आते सतो से रजो, तमो और फिर तमोप्रधान पतित बन जाते हैं तथा इन देह और देह के धर्मों (हिन्दू, मुस्लिम, सिख और ईसाई आदि धर्म) को ही अपना स्वधर्म समझकर 'यह मेरा है, वह तेरा है' के चक्कर में पड़ जाते हैं तथा इसके फलस्वरूप जब भाई-चारे, आत्मिक प्यार एवं एकता को खोकर लिंग-भेद, धर्म, जाति-भेद एवं रंग-भेद के आधार पर विभाजित एवं निर्बल बन जाते हैं, तब कलियुग के अंत में अतिधर्म ग्लानि होने पर पुनः निराकार ज्योति बिन्दुस्वरूप परमपिता परमात्मा शिव कल्याणकारी पुरुषोत्तम संगमयुग पर साकार में प्रकट होकर ब्रह्मा के मुखारविंद से पतित, कौड़ी-तुल्य एवं निर्बल आत्माओं को ज्ञान एवं सहज राजयोग (सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकम् शरणं व्रज) सिखा कर पुनः देही अभिमानी बनाकर स्वस्वरूप, स्वधर्म (पवित्रता एवं शांति), स्वदेश (शांति धाम), स्वकर्म की स्मृति एवं धारणा कराकर पुनः सम्पूर्ण सतोप्रधान अर्थात् सर्वशक्तियों एवं सर्वगुणों से सम्पन्न बनाकर आदि सनातन देवी-देवता धर्म की स्थापना करते हैं तथा कहते हैं- "मीठे बच्चे, विदेही बनकर बाप को याद करो, स्वधर्म में टिको तो ताकत मिलेगी, खुशी और तन्दरुस्ती रहेगी। आत्मा रूपी बैटरी चार्ज होती जायेगी।" इसीलिए कहा जाता है धर्म में शक्ति है (Religion is might) इस बात को दूसरे शब्दों में इस प्रकार कहा जाता है कि शान्ति में शक्ति है (Silence is power)। वर्तमान समय पुनः इसी धर्म की स्थापना परमपिता परमात्मा शिव प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय के माध्यम से सभी को ज्ञान एवं सहज राजयोग की शिक्षा देकर करा रहे हैं। तो भाइयो और बहनों! आओ हम सभी अपने आपको यथार्थ जानकर परमात्मा से सम्बन्ध जुटाकर अपने स्वधर्म में स्थित होकर 'स्व-धर्म में शक्ति है' -इसका प्रैक्टिकल में अनुभव करें तथा दूसरों को भी करावें।

गाजियाबाद - आध्यात्मिक संग्रहालय में भ्राता ए० एन० सेठ तथा अन्य को चित्रों की व्याख्या देती हुई ब्र० कु० कमलेश बहन।

राजनंद गांव - उच्चतर माध्यमिक विद्यालय में बच्चों को नैतिक शिक्षा देती हुई ब्र० कु० पुष्पा बहन।

संकल्प शक्ति और उसकी सिद्धि

हम स्वयं आत्मा हैं और आत्मा की मन रूपी शक्ति का कार्य है–निरन्तर संकल्प उठाना अर्थात् विचार-तरंगे पैदा करना, निरन्तर चिन्तन करते रहना। मन के मुख्य कार्य हैं–संकल्प, विकल्प, विचार, चिन्तन, ध्यान, धारणा, समाधि आदि। इन सभी में थोड़ा-थोड़ा ही अन्तर है।

शुद्ध संकल्प

शुद्ध संकल्प मन के उन विचारों को कहेंगे जो शुद्ध तथा समर्थ हों, साथ ही समस्त मानव-मात्र के कल्याणार्थ किये गये हों।

विकल्प

किसी व्यक्ति विशेष, समाज, राष्ट्र अथवा मानव-मात्र को अहित पहुंचाने की दृष्टि से किये गये संकल्पों को विकल्प कहेंगे। इसका आधार है ईर्ष्या, द्वेष, क्रोध आदि भावनायें।

विचार

मन द्वारा भूत, वर्तमान व भविष्य के लिए योजनाओं को बनाने के लिये किये संकल्प विचार कहलायेंगे।

चिन्तन

मन द्वारा कर्मेन्द्रियों का प्रयोग किये बिना किये गये संकल्पों या विचारों को चिन्तन कहेंगे।

ध्यान

मन जब किसी एक चित्र पर केन्द्रित किया जाता है अथवा किन्हीं विशेष विचार-पुञ्जों पर केन्द्रित किया जाता है अथवा किसी एक व्यक्ति या वस्तु के बारे में नाम, धाम, गुण, रूप व कर्त्तव्य के आधार पर चिन्तन करते रहते हैं तो आत्मा की उस स्थिति का नाम ध्यान है।

धारणा

मन द्वारा विचार किये जाने के बाद तथा बुद्धि द्वारा निर्णय लेने के पश्चात् आत्मा द्वारा शरीर से जो भी कार्य कराया जाता है, तो उससे संस्कारों का निर्माण होता है। अर्थात् आत्मा में चित्रों, आवाजों, गन्धों स्वादों व स्पर्श के ज्ञान का जो संकलन होता जाता है, मन की उस स्थिति को धारणा कहेंगे। इससे संस्कारों का निर्माण होता है।

ब्र० कु० ओमप्रकाश, बाँदा

समाधि

अशरीरी स्थिति में किये गये विचारों की स्थिति को समाधि कहेंगे। इस स्थिति में शरीर की ओर से आत्मा का ध्यान पूर्ण रूपेण हटा हुआ होता है। इस स्थिति में आत्मा, शरीर चेतना से अपने को सम्पूर्ण रूप से समेट कर केवल किसी विशेष योग की स्थिति में होती है। ऐसी स्थिति में पहुंचना प्रत्येक साधारण मनुष्य के लिये प्रायः सम्भव नहीं है। यह केवल योगियों के लिये ही सम्भव है।

टेलीपैथी

जब कोई मनुष्य किसी दूसरे मनुष्य के बारे में विचार करता है तो विचार तरगें चिन्तन कर रही आत्मा से उठकर ब्रह्मान्ड में फैल जाती हैं। इन विचारों को कोई भी शान्तचित्त आत्मा पकड़ सकती है और वह व्यक्ति तो बहुत आसानी से ही इन विचारों को पकड़ सकता है जिसके सम्बन्ध में चिन्तन किया जा रहा है। किन्तु शर्त यह है कि उसका ध्यान कहीं और न लगा हो अर्थात् उसका मन रूपी स्टेशन विचार तरगें लेने हेतु खाली हो। यह क्रिया ठीक उसी प्रकार से घटित होती है, जैसे कि रेडियो तरगों की क्रिया।

रेडियो स्टेशन से जब शक्तिशाली तरगें छोड़ी जाती हैं तो वे रेडियो यंत्र के माध्यम से पकड़ में आ जाती हैं। वह रिसीवर अर्थात् पकड़ने का कार्य करता है। जिस गति व लम्बाई की वे तरंगें छोड़ी गयी हैं रेडियो में वही नम्बर मिलाना होता है। जब नम्बर ठीक से मिल जाता है, तो ठीक वही आवाज आने लगती है जो कि रेडियो स्टेशन से छोड़ी जा रही अर्थात् ट्रान्समिट की जा रही होती है।

टेलीविजन

टेलीविजन केन्द्र द्वारा दृश्य व श्रव्य–दोनों प्रकार की तरगें छोड़ी जाती हैं जो टेलीविजन द्वारा ऐन्टिना के माध्यम से पकड़ी जाती हैं। तब वे दृश्य व आवाज हमें टेलीविजन में दिखाई व सुनाई देने लगते हैं। ठीक इसी प्रकार की क्रियायें या सम्बन्ध दो आत्माओं या अनेक आत्माओं प्रति या आत्मा और परमात्मा के मध्य या आत्माओं का प्रकृति के प्रति सम्भव है। इसे टैलीपैथी कहते हैं। इसे अभ्यास द्वारा बढ़ाया जा सकता है।

क्या किसी की मृत्योपरान्त रोना उचित है?

किसी भी मनुष्य की मृत्यु पर रोना सर्वथा अनुचित है। क्योंकि जिससे हमारे सम्बन्ध थे, वह तो वास्तव में आत्मा ही थी, शरीर तो उसका यन्त्र मात्र था। तो सत्य तो यह है कि आत्मा की मृत्यु तो होती

अपने वस्त्रों को बदलते हैं। "वासांसि जीर्णानि यथो विहाय"।

मृत्योपरान्त संकल्पों का खेल

जब एक आत्मा शरीर छोड़ती है तो वह पहले तो १३ से ४० दिन तक बिना किसी शरीर के बिना कुछ कार्य किये उसी स्थान के चक्कर लगाती रहती है। तत्पश्चात् अपने संस्कारों के अनुसार वह दूसरे गर्भ में जहां उसके लिये, उसी द्वारा रिमोट कन्ट्रोल से संयोजित पांच माह का पिन्ड तैयार होता है, प्रवेश करती है।

अब उस आत्मा से सम्बन्धित जो उसके पिछले जन्म में परिवार, सम्बन्धी, इष्ट मित्र, मिलने-जुलने वाले अथवा किन्हीं भी प्राणियों के कारण स्नेह-प्रेम रखने वाले-जो भी लोग होते हैं, यदि उस आत्मा को याद करते हैं तो पिण्ड में बैठते ही उस आत्मा को दूसरों के संकल्प मिलना प्रारम्भ हो जाते हैं। अब यदि उससे सम्बन्धित व्यक्ति उसके न रहने के कारण दुःखी होता है तो वे दुःख की तरंगें उस आत्मा को गर्भ में मिलती हैं जिनसे उसे पीड़ा होती है। और जब उसे पीड़ा होती है तो उसको गर्भ में धारण करने वाली माता भी शारीरिक व मानसिक पीड़ा का अनुभव करती है। अतः किसी भी व्यक्ति का उस आत्मा के प्रति मोह के कारण रोना अथवा दुःखी होना बिल्कुल भी उचित नहीं है। कहने को तो हम आत्मा की शान्ति की आकांक्षा प्रकट करते हैं किन्तु वास्तविक रूप से अधिकांश लोग इसका उल्टा ही करते हैं।

नये जन्म पश्चात् संकल्पों का खेल

जब आत्मा जब ४ माह गर्भ में रह लेती है तो ९ माह के शरीर के साथ वह फिर इस दुनियां में आ जाती है। उस समय यदि कोई सम्बन्धित व्यक्ति दुःख की तरंगें छोड़ता है तो वह नया जन्मा शिशु भी दुःखी हो जाता है। अब यदि हम वास्तव में उस आत्मा की भलाई चाहते हैं तो हमें पूर्ण मानसिक शान्ति रखनी चाहिए। यह मानसिक शान्ति तो बिना ईश्वरीय ज्ञान व राजयोग के अभ्यास के सम्भव ही नहीं है।

समस्त झगड़ों की जड़ है 'अशुद्ध संकल्प'

जब कोई आत्मा अथवा आत्मायें किसी व्यक्ति विशेष, समाज अथवा राष्ट्र के प्रति अशुद्ध संकल्प करती हैं, तो वे अशुद्ध संकल्प, जिनके बारे में चिन्तन किया जा रहा होता है, जाने या अन्जाने में अपना कार्य धीरे-धीरे करते रहते हैं। निरन्तर ईर्ष्या-द्वेष, क्रोध आदि विकारों की प्रधानता के तहत किये गये संकल्पों का ही परिणाम है - ग्रह-क्लेश, समाज-कलह और राष्ट्र-कलह।जहां देखो लड़ाइयां, मन-मुटाव, आन्दोलन-प्रदर्शन, तोड़-फोड़, हिंसा, झगड़े-फसाद,आदि-आदि की घटनायें। ये सब अशुद्ध संकल्पों का ही परिणाम है।

प्रदूषण की जड़ में भी है अशुद्ध संकल्प

आज जितने भी प्रकार के प्रदूषण हैं , जैसे कि जल-प्रदूषण, वायु-प्रदूषण व ध्वनि-प्रदूषण, जो समस्त मानव समाज तथा जड़ प्रकृति को आक्रान्त कर रहे हैं, उनके पीछे भी है अशुद्ध संकल्प अर्थात् लोभ व आलस्य आदि के तहत किये गये कार्य।

योग

आत्मा से आत्मा का योग अर्थात् जोड़। जब एक मनुष्य दूसरे मनुष्य अर्थात् एक आत्मा दूसरी आत्मा का ध्यान करती है अथवा उसके बारे में चिन्तन करती है तो वे विचार तरंगें वातावरण में फैल जाती हैं और दूसरों तक पहुंचती हैं। अब दूसरी आत्मा चाहे तो उसे पकड़े या उनकी ओर ध्यान ही न दे, यह उसकी व्यस्तता पर निर्भर करता है। इसे वैज्ञानिक भाषा में ट्रान्समिशन अर्थात् तरंगें छोड़ना व रिसीविंग अर्थात तरंगें पकड़ना कहते हैं। इसका उपयोग ऋषि लोग, तपे-तपाये महात्मा, फकीर आदि करने में पारंगत हो जाते थे और इसके उपयोग से वे द्रष्टा कहलाते थे। आज भी कोई-कोई ऐसे लोग होते हैं, जिन्हें पूर्वाभास हो जाता है और वे बता देते हैं कि देखो, फलां-फलां व्यक्ति आने वाला है, आदि-आदि। इस संकल्प-शक्ति के खेल को सिद्धि कहते हैं। यह सिद्धि जो व्यक्ति जितना पवित्र होगा या बनता जायेगा उसे उतनी मिलती जाती है। इन सिद्धियों में महात्मा बुद्ध, महात्मा ईसा, महात्मा मुहम्मद, महात्मा महावीर आदि सिद्धहस्त थे।

आत्माओं का प्रकृति से योग

जब कोई आत्मा किसी जड़ वस्तु का चिन्तन करती है तो उसके चिन्तन का प्रभाव जड़ वस्तु पर भी पड़ता है। उस आत्मा द्वारा चिन्तन करने से उठी विचार तरंगें उस जड़ वस्तु से टकराती हैं तो उनमें भी वांछित परिवर्तन होता है। उदाहरण स्वरूप आपने सुना होगा कि किसी संत महात्मा से कहा गया – "महाराज, पानी नहीं बरसता, कुछ ऐसा करें कि पानी बरसे"। तो वह महात्मा स्वयं तो प्रकृति का ध्यान करता ही है, साथ ही वर्षा की चाहना रखने वाली उन आत्माओं से भी आग्रह करता है कि वे भी सम्पूर्ण शक्ति से उसका ध्यान करें। और संकल्प शक्ति का मिलाजुला परिणाम यह होता है कि वर्षा हो जाती है। इस प्रकार के खेल को "जड़सिद्धि" कहेंगे।

किसी शहर में एक लाख लोग रहते हैं

सभी आवश्यकता पड़ने पर प्रकृति का चिन्तन भी करते हैं । अब यदि उन एक लाख आत्माओं में से बहुतायात लोग चाहते हैं कि पानी बरसे और बाकी चाहते हैं कि बारिश न हो, तो उसका प्रकृति पर असर उसी अनुपात में पड़ता है। आत्माओं द्वारा किये गये संकल्पों अर्थात् कर्मों के परिणामी बल का असर उस जड़ प्रकृति पर पड़ता है। सभी आत्माएं जिस तीव्र गति से शुद्ध अथवा अशुद्ध संकल्प छोड़ेंगी तो वैसी ही शुद्ध अथवा अशुद्ध घटना घटेगी। तभी तो शिवबाबा कहते हैं– मीठे बच्चो, प्रकृति प्रति शुद्ध संकल्प दौड़ाओ तो प्रकृति भी पवित्र होती जायेगी।

वैज्ञानिक प्रयोग

इसके दूसरे प्रकार के प्रयोग कर वैज्ञानिक लोग बहुत से नये-नये आविष्कार भी करते रहते हैं। निरन्तर प्रकृति के ही चिन्तन में अपनी शक्ति लगाते हैं तो उसमें पारंगत होते जाते हैं और नई-नई मशीनें आदि बनाते रहते हैं।

आत्मा का परमात्मा से योग

जब कोई आत्मा परमात्मा का ध्यान करती है, पूर्ण मनोयोग से उस परम शक्ति, सर्वशक्तिवान शिव का ध्यान करती है, संकल्प छोड़ती है तो उस समय उसका योग परमात्मा से जुड़ जाता है और जब उसका योग परमात्मा से जुड़ेगा तो उसे सर्वशक्तिवान से सर्व प्रकार की शक्तियां प्राप्त होंगी । अब चूंकि परमात्मा शान्ति, आनंद, ज्ञान और प्रेम का सागर है, तो वे शक्तियां उनका ध्यान कर रही आत्मा को प्राप्त होती जायेंगी उससे वह आत्मा शक्तिशाली बनती जाती है और सर्व प्रकार की सिद्धियां उस आत्मा को प्राप्त हो जाती है।

अब इस प्रकार का प्रयोग उन्हीं आत्माओं द्वारा सम्भव है जिन्हें स्वयं अपना खुद का ज्ञान हो, खुदा का सही-सही ज्ञान हो। तो यह सत्य ज्ञान तो केवल परमात्मा शिव ही आकर वर्तमान संगमयुग में हम आत्माओं प्रति ब्रह्मा मुख से प्रकट करते हैं। जो भी आत्मा इस ज्ञान को सुनेगी, समझेगी और उसका प्रयोग जीवन में करेगी, वह उतनी ही पवित्र हो जायेगी और उसे सर्व प्रकार की सिद्धियां मिलती जायेंगी। वह ईश्वरीय शक्ति सम्पन्न होती जायेगी। वह देवताई गुण प्राप्त करती जायेगी और अन्ततः वह आत्मा मानव से पूर्ण देवता बन जायेगी। परमात्मा को याद करने से उसके संकल्प भी शुद्ध होते जाते हैं । इससे उसे ऊपर वर्णित तीनों प्रकार की सिद्धियां मिलती हैं। आत्माओं की आत्माओं के प्रति संकल्पों की सिद्धि, आत्माओं की जड़ प्रकृति प्रति संकल्पों की सिद्धि तथा परमसिद्धि जो केवल देवता बनने वालों को ही प्राप्त होती है। सतयुग में रहने वाले समस्त देवता इस शक्ति में सम्पन्न थे। अतः उस समय रेडियो, टेलीविजन, टेलीफोन, ट्रांसमीटर की आवश्यकता ही नहीं थी।

तो हम क्या करें?

जब अधिक से अधिक मनुष्य इस प्रकार शुद्ध संकल्प करेंगे तभी तो सतयुग की स्थापना होगी। यदि मनुष्य आज की तरह केवल क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, देहाभिमान व आलस्य आदि विकारों की प्रधानता के तहत चिन्तन करेगा तो क्या होगा? यही न कि अशान्ति और अन्ततः विध्वंस। तो यदि हम विश्व में शान्ति चाहते हैं तो हमें अपने संकल्पों की शक्ति को पहचानना ही नहीं होगा वरन् उनको शुद्ध करना होगा तथा उनका सही दिशा में ही प्रयोग करना होगा, तभी समस्त विश्व का कल्याण होगा । ¤

रोहतक में आयोजित एक सम्मेलन में उपस्थित जनसमूह को ईश्वरीय सन्देश देती हुई ब्र कु. अरुणा बहन।

सेवा का फल– अखुट खजाने

ब्र० कु० कृष्णा, बिलासपुर

एक बार एक महात्मा जी निर्जन वन में भगवद्चिंतन के लिए जा रहे थे। तो उन्हें एक व्यक्ति ने रोक लिया। वह व्यक्ति अत्यन्त गरीब था। बड़ी मुश्किल से दो टाईम की रोटी जुटा पाता था। उस व्यक्ति ने महात्मा से कहा– 'महात्मा जी, आप परमात्मा को जानते हैं, उनसे बातें करते हैं। अब यदि परमात्मा से मिलें तो उनसे कहियेगा कि मुझे सारी उम्र में जितनी दौलत मिलनी है, कृपया वह एक साथ ही मिल जाए ताकि कुछ दिन तो चैन से जी सकूं। महात्मा ने उसे समझाया–मैं तुम्हारी दुखभरी कहानी परमात्मा को सुनाऊंगा लेकिन तुम जरा खुद भी सोचो, यदि भाग्य की सारी दौलत एक साथ मिल जाएगी तो आगे की जिन्दगी कैसे गुजारोगे?' किन्तु वह व्यक्ति अपनी बात पर अडिग रहा। महात्मा उस व्यक्ति को आशान्वित कर आगे बढ़ा।

इन्हीं दिनों में उसे ईश्वरीय ज्ञान मिल चुका था। महात्मा जी ने उस व्यक्ति के लिए अर्जी डाली। परमात्मा की कृपा से कुछ दिनों बाद उस व्यक्ति को काफी धन-दौलत मिल गई। जब धन-दौलत मिल गई तो उसने सोचा–"मैंने अब तक गरीबी के दिन काटे हैं, ईश्वरीय सेवा कुछ भी नहीं कर पाया। अब मुझे भाग्य की सारी दौलत एक साथ मिली है। क्यों न इसे ईश्वरीय सेवा में लगाऊं क्योंकि इसके बाद मुझे दौलत मिलने वाली नहीं।" ऐसा सोचकर उसने लगभग सारी दौलत ईश्वरीय सेवा में लगा दी।

समय गुजरता गया। लगभग दो वर्ष पश्चात् महात्मा जी उधर से गुजरे तो उन्हें उस व्यक्ति की याद हो आई। महात्मा जी सोचने लगे–"वह व्यक्ति जरूर आर्थिक तंगी में होगा क्योंकि उसने सारी दौलत एक साथ पायी थी। और कुछ भी उसे प्राप्त होना नहीं।" यह सोचते-सोचते महात्मा जी उसके घर के सामने पहुँचे। लेकिन यह क्या! झोपड़ी की जगह महल खड़ा था! जैसे ही उस व्यक्ति की नजर महात्मा जी पर पड़ी, वह तुरन्त दौड़कर साथ ले आये और आदर सत्कार किया। महात्मा जी उसका वैभव देखकर आश्चर्यचकित हो गये। उन्होंने पूछा–"मैं सोच रहा था कि तुम तंगी में होगे क्योंकि भाग्य की सारी दौलत तुम्हें एक साथ मिल गई थी। फिर तुम्हारी दौलत कैसे बढ़ गई? वह व्यक्ति नम्रता से बोला, "महात्मा जी, मुझे जो दौलत मिली थी, वह मैंने चन्द दिनों में ही ईश्वरीय सेवा में लगा दी थी। उसके बाद दौलत कहां से आई– मैं नहीं जानता। इसका जवाब तो परमात्मा ही दे सकता है"

महात्मा जी वहां से चले आए। निर्दिष्ट स्थान पर पहुँच कर ध्यान मग्न हुए। उन्होंने परमात्मा से पूछा–यह सब कैसे हुआ? महात्मा जी को आवाज सुनाई दी:–

'किसी की चोर ले जाए, किसी की आग जलाए,
धन उसी का सफल हो जो ईश्वर अर्थ लगाय।'

तो अब संगमयुग का वह समय आ गया जब हमें अपना धन ईश्वरीय सेवा में लगाकर २१ जन्म का राज्य भाग लेना है जिसकी ही यादगार यह कहानी है। अब नहीं तो कभी नहीं। याद रहे–यह हमारा अंतिम जन्म है, अब घर जाना है।

सोलापुर में आयोजित शिवजयन्ती महोत्सव का उद्घाटन दृश्य।

'तुम पवित्रता की रक्षा करो, पवित्रता तुम्हारी स्वतः ही रक्षा करेगी'

पात्रः-

ब्र० कु० महेश—राजयोग का विद्यार्थी
ब्र० कु० राजेश—राजयोगी, महेश का मित्र

महेन्द्र बाबू —महेश का पिता

प्रथम दृश्य

महेन्द्र—(महेश से) बेटा, हम तुम्हें वर्षों से शादी करने को कह रहे हैं, परन्तु तुमने ऐसी जिद् पकड़ी है जो किसी की सुनते ही नहीं। बड़े-बड़े महापुरुषों ने भी शादी की है। देवताओं ने भी तो शादी की थी। पता नहीं, तुम्हारा कैसा ज्ञान है?

महेश—(सहज भाव से) पिता जी, मैं एक बार भगवान से प्रतिज्ञा कर चुका हूँ। मैंने उसे ही अपना सच्चा प्रियतम मान लिया है। अब इस प्रतिज्ञा से हटने का प्रश्न ही नहीं।

महेन्द्र—(थोड़ा आवेश में) परन्तु मैं पूछता हूँ कि यह प्रतिज्ञा क्यों? इसके बिना भी तो भगवान् को याद किया जा सकता है।

महेश—पिता जी, बात केवल भगवान् को याद करने की ही नहीं, उसके समीप रहने की है, उससे मिलन मनाने की है। और बिना पवित्र बने, परम पवित्र परमात्मा से मिलन मनाना अथवा योग-युक्त होना, संभव नहीं। 'पवित्र बनो' —अब यह ईश्वरीय आज्ञा है। रही बात देवताओं की, मैं तो अभी देवता हूँ नहीं। जब देवता बन जाऊँगा तो अवश्य ही शादी कर लूँगा। देवताओं का जीवन तो सम्पूर्ण पावन था। यदि वे पावन न होते तो उनके साक्षात्कार-मात्र से ही मनुष्यों का मन निर्मल न होता और उनके चेहरों पर इतनी दिव्यता भी न होती।

महेन्द्र—तो तुमने हमारी न सुनने की भी प्रतिज्ञा कर ली है? यही सीखा है न तुमने कि अपने माता-पिता की भी अवज्ञा करो?

महेश—(नम्र भाव से) पिता जी, यह तो परम पिता की आज्ञा है। और उसकी आज्ञा

ब्र० कु० सूर्य, माउण्ट आबू

पालन करने में किसी की अवज्ञा नहीं होती। आप इसके अतिरिक्त जो आज्ञा करें, मुझे सहर्ष स्वीकार है। परन्तु कृपा करके मुझे विषय-वैतरणी नदी में न धकेलें।

महेन्द्र—(चिढ़कर)अरे मूर्ख, शास्त्र कहते हैं-तुम्हें पुत्र नहीं होगा तो तुम्हारी मुक्ति भी नहीं होगी। फिर ये तुम्हारा ज्ञान-ध्यान किस काम का?

महेश—पिता जी, फिर मुक्ति के इच्छुक सन्यासी ब्रह्मचारी क्यों रहते हैं? बिना सन्तान उनकी मुक्ति कैसे होगी?

महेन्द्र—(क्रोधित होकर) बस, तर्क करना सीखा है। बड़ों के आगे मुँह चलाना सीखगया है...। देख, मैं तुम्हें अन्तिम बारकहता हूँ,मेरी बात मान लो। नहीं तो, समाज हमें क्या कहेगा कि बेटे को कुँवारा ही रख दिया। कोई घर में रिश्ता नहीं करेगा।

महेश—पिता जी, समाज में तो आपको गौरव से उत्तर देना चाहिए कि देखो, महेश कितना महान् है जिसने संसार के सुखों को लात मार दी, संसार की विकारी राह से मुख मोड़ लिया। वह पवित्र बनकर हमारे २१ कुल का उद्धार करेगा। यह तो हमारे समाज का गौरव है। आपको तो कहना चाहिए कि महेश तो हमारे समाज में देवता है।

(यह सुनकर महेन्द्र थोड़ी देर टहलने लगता है और मन में सोचता है—कहता तो ठीक है महेश...हमारा जीवन कितना विकारी रहा और इसने पवित्र जीवन बनाने का साहस किया है। सचमुच यह तो महान् आत्मा है। परन्तु क्या वह जीवनभर पवित्र रह सकेगा? बड़े-बड़े ऋषियों के तप भंग हो गये...आजकल के कई महात्मा भी...कल कहीं महेश सफल न हो... नहीं महेश की शादी करनी ही होगी।...)

महेन्द्र—अब अन्तिम बार तुझे कह रहा हूँ कि शादी कर लो। बेटा, अकेले ही जीवन की लम्बी यात्रा तय करना सहज काम नहीं है...जीवन साथी तो चाहिए ही। जीवन में कभी दुःख-सुख है, कभी बीमारी है, अकेले कैसे रहोगे? बेटा, तुम्हें दुःख होगा तो मेरी आत्मा भी दुःखी होगी।

महेश—(नशे से) पिता जी, अब भगवान् ही मेरा जीवन साथी है। उसी से मुझे सच्चा सुख मिलता है। जहाँ उसका

साथ हो, वहाँ कोई कष्ट नहीं होता। उसके समक्ष मनुष्य-साथी का क्या महत्व...।

महेन्द्र—(अति क्रोध में) ये बातें कहकर तू मेरे दिल में आग लगा देता है। यदि मेरी बात नहीं मानता तो समझ ले कोई हिस्सा नहीं मिलेगा – न मकान, न दुकान, न तेरे हिस्से के दस लाख...

महेश—(नशे से) पिता जी, भगवान २१ जन्मों के लिए स्वर्ग की बादशाही दे रहा है। उसके समक्ष, ये सब तो कौड़ी समान है...मुझे आपका कुछ नहीं चाहिए। मैं तो सादा जीवन, तपस्वी जीवन बिताऊँगा...परन्तु परमात्मा का हाथ नहीं छोड़ूँगा।

महेन्द्र—(चिड़कर) तो तू जंगलों में भटकता फिरेगा...भीख मांगकर पेट भरेगा और हमारे सम्मान को दाग लगायेगा।

महेश—नहीं पिता जी, मैं गौरव से जीवन व्यतीत करूँगा। जंगल में भटकतों को राह दिखाऊँगा और आपका यश चारों दिशाओं में फैलाऊँगा। आप चिन्ता न करें।

महेन्द्र—(निराश मन से) महेश, हमारी बात मान ले। हमने भी तो संसार देखा है। ये मार्ग इतना सरल नहीं है...

महेश—पिता जी, अब भगवान् ने ये मार्ग सरल कर दिया है

महेन्द्र—अभी तू वैराग्य में है। जाओ, अपने मित्रों से राय कर लो, कल मुझे जवाब देना।

दूसरा दृश्य

(घर के आँगन में ही बगीचे का दृश्य...महेश अकेला घूम रहा है।)

महेश—(मन ही मन) क्यों न सारी सम्पत्ति ले लूँ। बैंक में रखकर खूब सेवा करूँ, धन्धे की झँझट भी न रहेगी। शादी कर लूँ। क्या है, पवित्र जीवन व्यतीत करूँगा। बाबा भी तो कहते हैं कि कोई महावीर बच्चा ऐसा करके दिखावे।

(इतने में राजेश का प्रवेश)

महेश—आइये राजेश, ओमशान्ति! आप ठीक समय पर आये, मैं आपको याद ही कर रहा था। बड़ी भारी परीक्षा आ गई है, समझ में नहीं आता क्या करूँ?

राजेश—बोलो, क्या हुआ महेश?

महेश—पिता जी बहुत तंग कर रहे हैं। सभी के सामने बहुत बुरा-भला बोलते हैं। कहते हैं– या तो शादी करो अन्यथा हम कुछ भी नहीं देंगे। कई लाख हिस्से में आते हैं।

राजेश—तो तुम्हारा क्या विचार है?

महेश—निर्णय नहीं कर पा रहा हूँ। एक तरफ धरती पर आये भगवान से की गई प्रतिज्ञा, दूसरी ओर लाखों की सम्पत्ति मन भ्रमित हो रहा है।

राजेश—परन्तु तुम्हारी आन्तरिक इच्छा क्या है, शादी करने की?

महेश—इच्छा है पवित्र जीवन बिताने की, अपने व्रत को पूर्ण करने की।

राजेश—फिर दुविधा क्या?

महेश—धन भी खींच रहा है क्या सब कुछ छोड़ दूँ? कल कुछ हो तो...

राजेश—मित्र, आपका मन विचलित हो गया है। ईश्वरीय प्राप्ति के आगे विश्व की समस्त सम्पत्ति भी मिट्टी समान है। याद करो महाभारत का वह वृतांत...युद्ध से पूर्व अर्जुन व दुर्योधन —दोनों श्री कृष्ण के पास सहायतार्थ पहुँचे। अर्जुन ने पसन्द किया केवल भगवान् को और दुर्योधन ने धन व सेना। क्योंकि अर्जुन जानता था "जहाँ भगवान् होंगे, वहीं विजयश्री होगी"। परन्तु कौरवपति को धन व वैभव ही प्रिय था, वह सेना को ही जीत का कारण मानता था।

तो बन्धु, पांडवों को भगवान् प्यारे हैं, धन कौरवों की प्रिय वस्तु है...आप पांडव हो...ये ईश-प्राप्ति फिर कभी नहीं होगी। जिसके दर्शन हेतु ही राजाओं ने सर्वस्व त्याग कर भूखा-प्यासा जंगल में रहना स्वीकार किया...उसे पाकर भी धन का लोभ...!

महेश—धन्य हो मित्र...मेरा ज्ञान-नेत्र बन्द हो गया था। सचमुच, धन का लोभ बुद्धि को भ्रष्ट कर देता है।

राजेश—विनाशकाल में धन किसी के भी काम नहीं आयेगा। काम आयेगा तो केवल ईश्वरीय बल व पवित्रता का बल...।

महेश—परन्तु, क्या शादी करके पवित्र जीवन नहीं जिया जा सकता है?

राजेश—ऐसे कई केस अब तक फेल हुए। एक बार भगवान् को अपना प्रियतम बनाकर किसी अन्य देहधारी को प्रियतम बनाना...क्या उसे धोखा देना नहीं होगा?...विचार कर लो, प्रभु का हाथ छूट सकता है।

महेश—मुझे आप एक ही अंतिम राय दो, मैं पालन करूँगा।

राजेश—तो सुनो महेश, लात मार दो इस सम्पत्ति को...धन मनुष्य का सच्चा साथी नहीं। भूखे रहकर भी पवित्र रहना होगा।

महेश—स्वीकार है मुझे आप जैसे सच्चे मित्र की राय। आपने मुझे बचाया, एहसान नहीं भूलूँगा।

राजेश—अच्छा, स्थिर रहना। अब मैं

चला।(महेश मन ही मन सोच रहा है– मुझे लात मार देनी है इन कौड़ियों को। ईश्वर का हाथ छोड़कर ये धन मेरा उसी तरह साथ नहीं देगा, जिस तरह भगवान् का साथ छोड़ने के कारण दुर्योधन को धन व सेना विजयश्री नहीं दिला सके। इस त्याग से ही जीवन में तेज़ आयेगा। अवश्य ही यह त्याग मुझे बल देगा। धन में सब सुख नहीं है।)

"तृतीय दृश्य"

(महेश का पिता महेन्द्र अपने कक्ष में अकेला है। मन उदास...उदासी में वह कभी बैठता है , कभी खड़ा होकर टहलता है और मन में सोच रहा है– कैसा जिद्दी लड़का है? बस, ज्ञान-योग का भूत सवार हो गया है। समाज की भी परवाह नहीं करता। काश, यह पैदा होते ही मर जाता। सबके लड़के शादी करके निश्चिन्त हैं। इसकी भी शादी हो जाए तो मैं निश्चिन्त हो जाऊँ ।

महेश का कमरे में प्रवेश...ललाट दिव्यता से चमक रहा है।)

महेश—नमस्कार पिता जी...

महेन्द्र—नमस्कार (महेन्द्र एकटिक उसके चेहरे को निहारते हुए) बेटा महेश, तुम सचमुच महान् हो, हमारे कुल की ज्योति हो...। मैं तुम्हारा सम्मान करता हूँ। परन्तु, बेटा, मेरी बात मान लो तो मेरा चित शान्त हो जाए...इतनी सम्पत्ति के तुम मालिक बन जाओ...

महेश—(शान्त भाव से) क्षमा करें पिता जी...एक ओर भगवान् , दूसरी ओर ये सम्पत्ति...आप ही बताओ मैं किसे चुनूँ...?

महेन्द्र—(चुप...निरूत्तर)

महेश—(गर्व से) मुझे सम्पत्ति नहीं चाहिए। मैं तो इस जीवन को ईश्वरीय छत्रछाया में व्यतीत करूँगा और इसके लिए विनाशी धन-सम्पत्ति तो क्या ,मैं सर्वस्व बलिदान करने को तैयार हूँ।

महेन्द्र —(उत्तेजना में) फिर वही बात। तू एक पिता के दिल को घायल कर रहा है।तू मुझे बेमौत ही मौत दे रहा है। तुझ पर हत्या का पाप लगेगा।

महेश —(शांन्त)

महेन्द्र —(क्रोध में) तूने मेरी नाक कटवा दी...मैं समाज में कैसे मुँह दिखाऊँगा। तुझे अपने कर्त्तव्य का भी ज्ञान नहीं है। बस, मेरे बेटों में एक तू ही नालायक निकला।

महेश—पिता जी, क्रोध न करें। क्रोध से तो मनुष्य का विवेक भी नष्ट हो जाता है। कृपया, आप शान्त हों...।

महेन्द्र —(क्रोध से) मुझे भी शिक्षा देता है। बड़ा विद्वान बनता है। निकल जा इस घर से...मुँह नहीं दिखाना मुझे...कुल कलंकित...(महेश को लात मारते हुए) जाओ यहाँ से...यहाँ तेरा कुछ भी नहीं ,न मैं तेरा बाप, न तू मेरा बेटा...दूर हो जा मेरी आँखों से...।

महेश—(मन ही मन) हे मेरे प्राणेश्वर बाबा...रक्षा करो मेरी!(उसके मन में आवाज आती है—"वत्स, तुम पवित्रता की रक्षा करो, पवित्रता स्वतः ही तुम्हारी रक्षा करेगी। पवित्रता से बड़ी सम्पत्ति और कोई नहीं।")

महेन्द्र—(क्रोध से) क्या सोच रहा है...शादी नहीं करनी है तो निकल जा खाली हाथ...यदि तुझे भगवान् मिला है तो सम्पत्ति से क्यों मोह...चला जा अपने भगवान् के पास...

महेश—(शान्त भाव से) एक बार फिर सोच लो पिता जी...ऐसा न हो अपने कुल के दीपक को. त्याग कर जीवन-भर पछताओ ।...

महेन्द्र—(क्रोध से) बकवास बन्द कर, तू कुल-कलंकित है...मुड़कर यहाँ नहीं आना। जीते जी, मैं तेरा मुँह न देखूँ...हट जा मेरे नयनों के सामने से...देखना, कौन पछताता है– मैं या तू ?

महेश—जो आज्ञा पिता जी। आपका भला हो, आप सुख से जियो।

(महेश खाली हाथ घर से निकल जाता है...वह शान्त मन से रास्ते से गुजर रहा है...अब उसे कोई दुविधा नहीं...जीवन में त्याग का बल भर गया है। मन में एक अनूठा-सा आनन्द है।)

चतुर्थ दृश्य

(एक सुन्दर-सा मकान । एक कक्ष में महेश बीमार हालत में चारपाई पर लेटा हुआ है। राजेश उसके पास बैठा है...मधुर संगीत बज रहा है।)

महेश—राजेश भाई, क्या करूँ, स्वास्थ्य ठीक नहीं हो पा रहा है, पैसा भी समाप्त हो गया है। आज ही दफ्तर से भी आदेश आये हैं —या तो काम पर आओ, या नौकरी छोड़ो। बड़ी भारी परीक्षा आ गई है।

राजेश — आफिस से १५ दिन का समय और ले लेते हैं । पैसे की आप चिन्ता न करें, मेरा सब कुछ अपना ही समझो । भगवान् सब कुछ ठीक करेंगे। दोस्त, परीक्षा के समय ही तो मनुष्य के धैर्य व विवेक की परख होती है। ये परीक्षाएँ तो सभी के सामने

आती हैं। ये कष्ट ही तो मनुष्य के जीवन को निखारते हैं।

महेश—राजेश भाई, जब दर्द बहुत होता है और पास कोई नहीं रहता तो मन विचलित हो जाता है कि कहीं मैंने सब कुछ त्यागकर गल्ती तो नहीं की। आज यदि मेरे पास धन होता...

राजेश—सावधान महेश, माया के ये कमजोर विचार आपके मन में कहाँ से आये? यदि धन से ही स्वास्थ्य प्राप्त होता तो धनवान बीमार न होते। एक बार जो त्याग किया, उसका चिन्तन भी त्याग के बल को कम कर देता है। इसलिए, अब स्वयं में बल भरो। भगवान् स्वयं ही छत्रछाया बनकर तुम्हारे साथ हैं।

महेश—परन्तु विचार तो चलता है, कल नौकरी छूट जाये तो सारे लोग मुझ पर हंसेंगे। मैं कभी भी सिर ऊपर नहीं कर सकूँगा। सच भैया, मुझे बड़ा ही अकेलापन लगने लगता है।

राजेश—महेश, कभी नहीं भूलना कि ये सृष्टि-नाटक सदा ही कल्याणकारी है। भगवान् ने स्वयं जिसका हाथ पकड़ा हो, उसका कभी भी अकल्याण नहीं हो सकता। नौकरी छूटे तो भी क्या। हमारा बाप विश्व का पालनहार है। क्या उसके बच्चे भूखे रहेंगे । महेश, आप मेरे साथ काम करना। अब आप निश्चिन्त हो जाओ।

महेश—मैं आपका दिल से शुक्रगुजार हूँ। बाबा ने ही शायद आपको मेरी मदद के लिए भेजा है। मुझे याद आने लगी है वही बाबा की प्रेरणा –"बच्चे, तुम पवित्रता की रक्षा करो तो पवित्रता तुम्हारी रक्षा करेगी।"

राजेश—सचमुच, ये सब उस परमपिता का ही प्रताप है। उसने हमें इस योग्य बनाया कि हम किसी की मदद कर सकें। अब आप बीमारी को तन-मन को शुद्ध करने का साधन समझ प्रसन्न रहो। इस समय को भी अपना परम मित्र समझ कर इसका लाभ उठाओ।

महेश—ठीक है मित्र, बाबा भी मेरा मित्र है और आप भी। ये व्याधि भी मेरी मित्र है और ये समय भी...सचमुच, मेरा मन हिल रहा था। आपने मुझे प्रकाश दिया, मेरे मन का अन्धकार लोप हो गया।

"पाँचवां दृश्य"

(महेश व राजेश दोनों एक कक्ष में बैठे अपना व्यापार का खाता देख रहे हैं। दोनों के चेहरों पर खुशी झलक रही है)

राजेश—महेश भैया, ३ वर्ष पूर्व व्यापार में जब आप मेरे साथी बने तब से हमारा व्यापार कई गुणा हो गया।

महेश—हाँ, इसे ही तो बाबा कहते हैं, 'सब कुछ कल्याणकारी है' ।

राजेश—मित्र, अब तो कभी छोड़ी हुई सम्पत्ति याद नहीं आती ?

महेश—लज्जित न करो दोस्त...हाँ कभी-कभी माँ की याद अवश्य आती है। उसने हमें बड़े प्यार से पाला था। परन्तु उन्हें कुछ भी सुख न दे सके...।

(इतने में ही घण्टी बजती है। राजेश दरवाजा खोलता है। बाहर एक वृद्ध खड़े हैं...)

वृद्ध—यहाँ कोई महेश नाम का लड़का रहता है?

राजेश—आइये बाबू जी, अन्दर आइये। महेश से मिलिये...

(पिताजी को देखकर महेश खड़ा हो जाता है)

महेश–आइये पिताजी, नमस्कार..... आइये, बैठिये। अहो भाग्य हमारे...आपने दर्शन दिये...कई बार मुझे आपकी याद आती थी...आपकी बचपन की पालना व प्यार याद आता था...आपसे मिलकर मन प्रसन्न हो रहा है।

महेन्द्र —(सिसकती हुई आवाज में) बेटा महेश, माफ करना मुझे...माफ कर दे एक पापी पिता को... ८ वर्ष में, मुझे मेरे पापों का दण्ड मिल गया।

महेश—शान्त हों पिता जी...आपने तो कोई पाप नहीं किया...।

महेन्द्र —नहीं बेटा, मैं बड़ा पापी हूँ। मैंने तेरे जैसे महान् सपूत को घर से निकाला...तुझे कंगाल बनाकर ठोकर मारकर निकाला...कपूतों को सम्पत्ति दी...मेरा मन रो रहा है बेटा...तू मुझे क्षमा कर दे, तब ही मुझे शान्ति मिलेगी।

महेश—पिता जी धैर्य धरो। आपने तो मुझ पर बड़ा उपकार किया। मुझे नष्टोमोहा बना दिया, सम्पत्ति से मेरा ममत्व तुड़वा दिया। जिसके लिए मुझे जीवन भर साधना करनी पड़ती। यदि आप यह पुण्य न करते तो आज मैं योगी न बन पाता...मैं आपका शुक्रगुजार हूँ...

महेन्द्र —(भावुक हो कर उठकर महेश को गले लगा लेता है) तुम बहुत महान् हो बेटा!

महेश—और पिता जी, हमारे सभी भाई कैसे हैं? माँ तो सुखी है न।

महेन्द्र —(रोने की आवाज में) तुम्हारी माँ तुम्हें याद कर-करके अश्रुधार बहाती है। तुम्हारे दोनों भाई हमारे दुश्मन बन गये। हमसे सारी सम्पत्ति छीन कर हमें निकाल दिया बेटा, हमें खाने के भी लाले पड़ गये।बेटा,मैंने तुम्हारेसाथ अन्याय किया

महेश—पिता जी, भूल जाओ सब कुछ। अब भी आप जागे, यही भाग्य है आपका। आओ, अब दोनों हमारे ही पास रहो और जीवन की अन्तिम यात्रा को ज्ञान-योग से पूर्ण करो...।

महेन्द्र—धन्य हो बेटा, तुम महान् हो...संसार तुम्हारा यशगान करेगा... तुम उस बाप को शरण दे रहे हो, जिसने तुम्हें देश निकाला दिया। भगवान् करे, तुम अपने लक्ष्य में सफल हो।

महेश—पिताजी, मुझे आज हर्ष हो रहा है...बिछुड़े बाप को पाकर अब मैं आपके प्रति अपना कर्त्तव्य पूरा कर सकूँगा। माँ को भी ले आओ और भगवान् से मिलन मनाओ।

महेन्द्र—मेरा दिल ठण्डा हो गया अपने बिछुड़े बेटे को पाकर। मैंने तुम्हें बहुत ढूंढा...अब मैं तुम्हारे पास रहकर जीवन को सफल करूँगा। तुम्हारा, ये सब कुछ देख कर मुझे आत्मसन्तोष मिला। बड़ी मेहनत की होगी, बेटा?

महेश—पिता जी, जहाँ हिम्मत हो, जहाँ भगवान् का साथ हो, भगवान् में विश्वास हो, वहाँ कुछ भी असम्भव नहीं। हर मनुष्यअपना भाग्य साथ लाया है...कोई भी यहाँ किसी का पालनहार नहीं है। जहाँ पवित्रता का श्रेष्ठ बल है, वहाँ प्रकृति भी दासी बन जाती है। मैंने पवित्रता का व्रत एक बार लिया, मुझे हर कीमत पर उसे निभाना था। चाहे संसार छिन जाए परन्तु यह व्रत अमर रहेगा...

महेन्द्र—धन्य हो तुम्हारा व्रत...धन्य हो तुम। तुम सचमुच महेश (महा + ईश) हो...महेश तुल्य हो।

(समाप्त)

तज कर अगर-मगर तू...

दुनिया बदल रही है और तू है बेखबर
जाना तुझे किधर है और जा रहा किधर?

गफलत की ओढ़ चादर, आलस की नींद सोता,
पापों का बोझ ढोकर, सिर हाथ धर के रोता।
विषयों की विष भरी में अब तक लगाया गोता
अब वक्त जा चुका है, मिला मौत का है न्योता।

फिर भी बनेगी बिगड़ी तू चेत ले अगर
जाना तुझे किधर.....

उठ जाग जग का मालिक शिव आ चुका धरा
पे वह ज्ञान-सूर्य प्रगटा अब विश्व के गगन पर
आबू की चोटियों पर ब्रह्मा के तन को धर कर
तकदीर बांटता है हर ज़िंदगी बदलकर

तजकर अगर-मगर तू, आ जा तनिक इधर
जाना तुझे किधर.....

ब्र० कु० संजय कुमार, आबू पर्वत

आत्म-परिवर्तन से विश्व-परिवर्तन

आत्म-परिवर्तन करो, विश्व-परिवर्तन के लिए
स्वार्थ-सुख सब त्याग दो, सबकी भलाई के लिए।

एक पल तो सोच लो, आये हो क्यूं संसार में
भूल नफरत-बैर देखो, है भला क्या प्यार में !

दृष्टि परिवर्तन करो, सृष्टि परिवर्तन के लिए
आत्म-परिवर्तन करो.....

कल किया जो आज पाये, आज का कल फिर मिलेगा
कर्म की क़िस्मत है मंज़िल, बिन किये कुछ न मिलेगा

बीज शुभ कर्मों का बोओ, मधुर फल पाने के लिए
आत्म-परिवर्तन करो.....

कर्म के कर्त्ता तुम्हीं हो, भाग्य-निर्माता तुम्हीं हो
झांक लो निज चेतना में कर्त्ता-धर्ता सब तुम्हीं हो।

शिव पिता है पथ प्रदर्शक, फिर रुका है किसलिए
आत्म-परिवर्तन करो.....

ब्र० कु० सतीश कुमार, माउण्ट आबू

पृष्ठ १७ का शेष

करना। दूसरा लाभ यह होता है कि राजयोग द्वारा हमारा विशेष विश्वास शान्ति के प्रति बढ़ता है जिससे हम किसी से ईर्ष्या नहीं करते तथा किसी परिस्थिति में हम भयभीत नहीं होते तथा हमारा दृष्टिकोण बदल जाता है और हम कभी तनाव में नहीं रहते।

दिल्ली (दिलशाद गार्डन)-सेवाकेन्द्र पर आयोजित कार्यक्रम में प्रवचन करते हुए ब्र० कु० डॉन

अकोला में आयोजित शिवजयन्ती महोत्सव में अपने विचार व्यक्त करते हुए बहन भाटवडेकर।

दिल्ली (त्रिनगर) - शिवजयन्ती महोत्सव में मंच पर विराजमान हैं (बाएं से) भ्राता साहिब सिंह, नगर निगम पार्षद, भ्राता श्याम लाल गर्ग, महानगर पार्षद, ब्र० कु० मुरारी लाल, भ्राता मदन लाल खुराना, अध्यक्ष, भा० ज० पा० (दिल्ली प्रदेश), ब्र० कु० आशा, ब्र० कु० बृजमोहन, सम्पादक, प्युरिटी।

. शिवरात्रि पर्व पर ध्वजारोहण करते हुए भ्राता प्रेम ी, प्रधान, महावीर दल।

बैंगलोर में आयोजित स्नेह-मिलन कार्यक्रम में उपस्थित हैं प्रसिद्द अभिनेता भ्राता लोकेश जी, बहन गिरिजा लोकेश तथा अन्य।

भोपाल ५३वीं महाशिवरात्रि के अवसर पर आयोजित समारोह में उपस्थित जनसमूह को सम्बोधित करते हुए भ्राता एस० एन० राव, सचिव म. प्र. मंच पर उपस्थित हैं ब्र० कु० महेन्द्र, ब्र० कु० अवधेश बहन, ब्र० कु० ईश जी।

सोलन - ५३वीं शिवरात्रि पर आयोजित 'शिव-दर्शन प्रदर्शनी' में भ्राता आर० के० गान्धी, राज्यपाल, हिमाचल को शिव का सत्य परिचय देते हुए ब्र० कु० सुषमा बहन।

मन्दसौर - महाशिवरात्रि के उपलक्ष्य में आयोजित समारोह में आस्ट्रेलिया के भ्राता ली. जेम्स को गुलदस्ता भेंट करते हुए ब्र० कु० ममता बहन।

विशाखापट्नम - ज्ञानामृत के मुख्य सम्पादक ब्र० कु० जगदीश चन्द्र जी दैनिक समाचार पत्र 'आन्ध्रा ज्योति' के संवाददाता को 'सुखमय संसार योजना' से अवगत कराते हुए।

फर्रुखाबाद - जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी महेन्द्र सरस्वती को ईश्वरीय सौगात देने के पश्चात ब्र० कु० मन्जु तथा अन्य खड़े हुए।

धरान (नेपाल) - शिवरात्रि पर्व पर आयोजित स्नेह मिलन कार्यक्रम में वहां के एस.पी. तथा डी. एस.पी. तथा शांता बहन तथा अन्य के साथ ग्रुप फोटो में।

गोण्डा - महाशिवरात्रि के अवसर पर शिवध्वजारोहण के पश्चात् सभी भाई-बहन एक ग्रुप फोटो में।

वाराणसी - स्वामी चिदानन्द सरस्वती जी से ज्ञान-वार्तालाप करते हुये ब्र० कु० सुरेन्द्र बहन तथा ब्र० कु० पुष्पा जी

देहरादून - शिवरात्रि पर्व पर आयोजित कार्यक्रम में भ्राता सरदार गुरनाम सिंह को बैज लगाती हुई ब्र० कु० राजबाला।

हरिद्वार - स्वामीश्री रुक्दानन्द जी को आध्यात्मिक संग्रहालय का अवलोकन कराती हुई ब्र० कु० मंजू बहन।

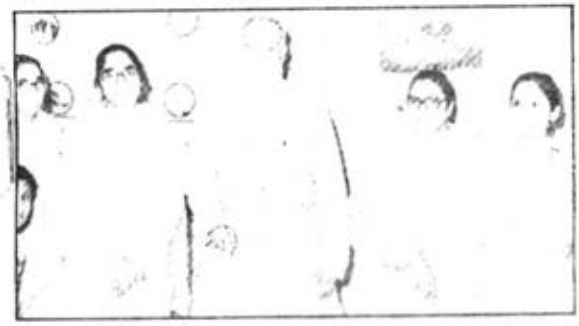

बोकारो - शिवजयन्ती के अवसर पर सेवाकेन्द्र पर भ्राता पी. एन. त्रिपाठी, ब्र० कु० कुसुम, अणु तथा अंजू बहन के साथ।

दिल्ली (हरी नगर) त्रिदिवसीय 'शिवदर्शन आध्यात्मिक प्रदर्शनी' के उद्घाटन के पश्चात् डा. सीता राम शर्मा, उपनिदेशक (शिक्षा) तथा अन्य ग्रुप फोटो में।

विजयवाड़ा में आयोजित 'शिवदर्शन प्रदर्शनी' का उद्घाटन करते हुए डा. जे. शंकर, मेयर।

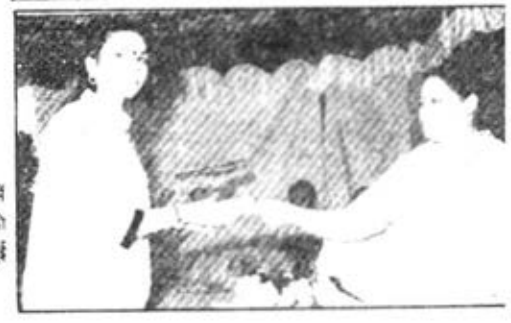

धुलिया महाविद्यालय में मेधावी छात्र-छात्राओं को पुरस्कार वितरित करती हुई ब्र० कु० रीटा बहन।

दिल्ली (उत्तम नगर) में आयोजित आध्यात्मिक कार्यक्रम में भाषण करते हुए ब्र० कु० लक्ष्मण, प्रबन्धकीय सम्पादक, दी वर्ल्ड रिन्युअल

दिल्ली (कश्मीरी गेट) 'राजयोग शिविर' का उद्घाटन दृश्य।

नेपाल के संघार राज्य मन्त्री भ्राता थापी जी को ईश्वरीय सौगात भेंट करती हुई ब्र० कु० शीला बहन।

गोहतक में एक कार्यक्रम में प्रसिद्ध अभिनेता भ्राता सुनीलदत्त को ईश्वरीय सन्देश देती हुई ब्र० कु० लक्ष्मी बहन।

अम्बाजोगाई में आयोजित शिवजयन्ती महोत्सव में प्रवचन करती हुई ब्र० कु० प्रमिला बहन।

खानपुर (इलाहाबाद) में आयोजित 'आध्यात्मिक प्रदर्शनी का उद्घाटन दृश्य।

भाखनगर - 'मानव विकास विज्ञान' सम्मेलन में भाषण करते हुए ब्र० कु० बृजमोहन, सम्पादक, प्यूरिटी।

खोतारा (नेपाल) - आध्यात्मिक प्रदर्शनी के उद्घाटन के अवसर पर उपस्थित भाई-बहन एक ग्रुप फोटो में।

पटना - आध्यात्मिक प्रदर्शनी का उद्घाटन करते हुए भ्राता किशन नन्दन, मेयर, पटना।

बैंगलोर - परमात्मा शिव के ५३वें दिव्य जन्मोत्सव पर केक काटते हुए ब्र० कु० हृदय पुष्पा जी।

कटक के प्रतिष्ठित व्यक्तियों को 'आध्यात्मिक संग्रहालय' का अवलोकन कराती हुई ब्र० कु० कविता बहन।

शिलांग - महाशिवरात्रि पर्व पर निकाली गई शान्ति-यात्रा का एक दृश्य।

अजमेर में आयोजित आध्यात्मिक प्रदर्शनी का उद्घाटन भ्राता सूरजमल, अध्यक्ष, विश्व हिन्दू परिषद्, अजमेर मोमबत्ती जलाकर कर रहे हैं।

उज्जैन में आयोजित 'सर्व धर्म सम्मेलन' का उद्घाटन दृश्य

अहमदाबाद — ८३ की महाशिवरात्रि पर शिवध्वजारोहण के पश्चात शिव-स्मृति में खड़े हैं भ्राता देवेन्द्र विजय महाराज, ब्र० कु० सरला तथा अन्य।

देहली (अशोक विहार) ब्र०कु० राज भ्राता दीप चन्द बन्धु सदस्य नगर निगम को श्री लक्ष्मी जी नारायण का चित्र भेंट करती हुई।

भरतपुर निकटवर्ती गीता पाठशाला सीमकों में शिवध्वजारोहण के पश्चात् भाई बहिनें शिवस्मृति में खड़े हुए।

सिरसा - महाशिवरात्रि उत्सव पर आयोजित आध्यात्मिक प्रदर्शनी का उद्घाटन करते हुए भ्राता हंसराज जी।

बरनाला सेवाकेन्द्र पर भ्राता एन० एस० नाथ, तहसीलदार पधारे। उन्हें ईश्वरीय सौगात देते हुए ब्र० कु० बृज बहन

दिल्ली (मालवीय नगर) - शिवरात्रि पर्व पर शिवध्वजारोहण करने के पश्चात् ब्र० कु० सुन्दरी, न्यायाधीश जसवन्त सिंह जी, भ्राता अग्रवाल जी, संयुक्त सचिव तथा अन्य एक ग्रुप फोटो में।

फरीदाबाद: शिवजयन्ति समारोह में प्रवचन करती हुई ब्र०कु० उषा बहिन

मुज्जफरनगर विद्यालय में 'रचनात्मक कर्मशाला' का संचालन करते हुए ब्र० कु० सन्तोष बहन।

मुरादनगर में शिवजयन्ति महोत्सव के अवसर पर शिवध्वजा-ग्रहण करते हुए भ्राता वर्मा जी।

हिसार: कृषि मेले में स्टाल में चित्रों पर समझाने के पश्चात ब्र०कु० रमेश उपकुलपति भ्राता स्वरूप सिंह चौधरी जी को ईश्वरीय सौगात देती हुई।

अलीगढ़ - शिवरात्रि पर आयोजित समारोह में मंच पर विराजमान हैं भ्राता महीपाल सिंह, अध्यक्ष, जिला परिषद्, भ्राता ओमप्रकाश अग्रवाल, अध्यक्ष, नगरपालिका, ब्र० कु० बिमला, ब्र० कु० शीला बहन।

जम्मू- महाशिवरात्रि उत्सव पर शिवध्वजारोहण के पश्चात् सभी भाई-बहन शिव-स्मृति में खड़े हैं।

पाटन - हारीज में शिवरात्रि पर्व पर शिवध्वजारोहण के पश्चात् आयोजित कार्यक्रम में भ्राता शान्ति भाई के. ठक्कर, ब्र० कु० नीलम, ब्र० कु० किरण, ब्र० कु० जागृति।

रीवा - ५३ वीं शिवरात्रि पर्व पर आयोजित समारोह में भाषण करते हुए भ्राता एम० पी० शुक्ल, अध्यक्ष पर्यावरण प्रदूषण निवारण मंडल, मध्यप्रदेश।

आल इन वन
(All in One)

मानव एक सामाजिक प्राणी है। सामाजिक प्राणी इसलिए कहा गया है कि वह समाज के बिना जी नहीं सकता। समाज है ही क्या? समाज, सामाजिक-सम्बन्धों का जाल है (Society is the web of social-relationships)। दूसरे शब्दों में, मानव,समाज में अन्य लोगों के साथ भिन्न-भिन्न सम्बन्धों के साथ जीता है। अगर किसी मनुष्य के जीवन में सम्बन्धी या रिश्तेदार नहीं हैं तो वह आनंद से जी नहीं सकता और उसका जीवन प्रायः नीरस-सा बन जाता है। जीवन में धन-कनक-वैभव होते हुए भी कई सम्बन्धी या बन्धु लोग न हों तो उस जीवन को अधूरा माना जाता है,यह हुई देह और देह के सम्बन्धियों की लौकिक बातें।

इसी प्रकार अध्यात्मिक या पारलौकिक जीवन में भी भगवान् के साथ सर्व सम्बन्ध निभाने की कला जो नहीं जानता या जानते हुए भी उस कला को नहीं निभाता, उसे जीवन में सब कुछ प्राप्त होते हुए भी वह नीरस और फीका अनुभव करता है। योगी जीवन या संगमयुगी सर्वोतम अलौकिक जीवन को सार्थक बनाना हो तो भगवान् के साथ सर्व सम्बन्धों को निभाना अनिवार्य है। भक्ति में गाते भी हैं-

त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव
त्वमेव विद्या च द्रविणम् त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम् देव देव।।

अर्थात् हे प्रभु, तुम्हीं मेरे माता और पिता हो, तुम्हीं मेरे बन्धु और सखा हो। इतना ही नहीं, हे प्रभु, तुम ही मेरे सब कुछ हो!

तो लौकिक जीवन की पूर्णता के लिए जिन सम्बन्धियों की जरूरत है, वे सब एक भगवान् ही के साथ अनुभव कर सकते हैं। उदाहरण के तौर पर-(१) बाप (२) माँ (३) शिक्षक (४) गुरू (५) सखा (६) सखी (७) बच्चा (८) मालिक ।

याद रहे-साजन अथवा सजनी किसी दैहिक सम्बन्धी के साथ वह सम्बन्ध निभाने के लिए उसका पूरा परिचय होना आवश्यक है, इसके साथ-साथ हमारे में उस व्यक्ति के प्रति भावुकता का भाव रहना बहुत ही जरूरी है। ज्ञान-मार्ग में भी सिर्फ भगवान् के परिचय मात्र से कोई भी व्यक्ति सिद्धीस्वरूप योगी नहीं बन सकता। अगर

ब्र० कु० महेश, कृष्णा नगर, दिल्ली

मेरे में ईश्वरीय ज्ञान अथाह है लेकिन ईश्वर के प्रति भावुकता, दूसरे शब्दों में, प्रेम नहीं है तो मैं सिर्फ पंडित बनूंगा, न कि परमात्मा-प्रिय पार्थ। दैहिक सम्बन्धों में ममता या भावुकता रखने से धोखा खा सकते हैं, परन्तु विदेही भगवान् के साथ ज्ञानयुक्त और भावनायुक्त सम्बन्ध रखने से कर्म रूपी हर कदम में अनुपम अनुभव और प्राप्तियां होंगी। आओ, अब उन एक-एक स्वरूप का अनुभव करेंगे।

परमात्मा -'परमपिता'

देखा जाये तो साकार लोक में हरेक व्यक्ति का जीवनोदय अपने पिता से ही होता है। बाद में माँ तथा अन्य सम्बन्धियों से। तो हम अमृतवेले उठते ही परमात्मा को परम पिता के स्वरूप में याद करें। परमात्मा परमपिता अर्थात् जगत-पिता है तो मैं उसका पुत्र परमपुत्र हूँ। जो काम बाप करता है, उसी काम को उसी तरह करने वाला पुत्र ही सुपुत्र या परमपुत्र कहेंगे। तो हम साकारी होते हुए निराकारी स्थिति में रहते निराकार परमपिता के गुणों एवं शक्तियों को स्वयं में धारण करते कर्म में लायें।

बापदादा कहते-"मीठे बच्चे, अमृतवेले दिन का आरम्भ होते बाप से मिलन मनाते,मा० वरदाता बन वरदाता से वरदान लेने वाली श्रेष्ठ आत्मा हूँ, डायरेक्ट भाग्यविधाता द्वारा भाग्य प्राप्त करने वाली पद्मापद्म भाग्यवान आत्मा हूँ – इस श्रेष्ठ स्वरूप को इमर्ज करो।"

इस प्रकार अमृतवेला शुरू होते ही हमें भगवान को परमपिता या बाप के रूप में और स्वयं को उसका परम पुत्र या बच्चा मानकर भगवान को याद करना है।

प्रभु-मां

माँ के स्वरूप में भगवान् को याद करने के लिए अपने को एक छोटा-सा लेकिन एक नन्हा-सा बच्चा समझो। ऐसे, रोज चायपान या दूध पान करते समय अनुभव करो कि प्रभु-मां निराकार होते हुए ब्रह्मा के शरीर द्वारा मुझ आत्मा को पिला रही है। जब भोजन के लिए बैठते हैं तब वही प्रभु-माँ के हस्तों से खाओ। यह अनुभव करो कि ईश्वर-मां मुझे अपने हस्तों (ब्रह्मा के हाथों) द्वारा अमर बनाने वाला ब्रह्माभोजन खिला रही है। फिर जब कर्म क्षेत्र में कर्म- करते-करते थक जाते हो तो मां के गोद में सो जाओ, समा जाओ।

परमात्मा – परम शिक्षक

शिक्षक अर्थात् ।शिक्षा देने वाला अर्थात् जीवन-काल के लिए शिक्षा प्रदान करनेवाला। परमात्मा हमारे परमपिता और माँ के साथ-साथ हमारे परम शिक्षक भी हैं। इस शिक्षक के स्वरूप को जब हम

रोज सुबह और संध्या काल ईश्वरीय महाकाव्य सुनते हैं, तब ईश्वर को अपना परम शिक्षक समझें और अपने को ईश्वरीय विद्यार्थी। उस समय यह महसूस करें कि भगवान् मेरे लिए ही उस परमधाम को छोड़ कर इस धरती पर आया है। तो परमशिक्षक के परम ज्ञान को या पढ़ाई को नित्य मनन, चिन्तन और धारण करना नहीं भूलना चाहिए। सदैव यह याद रहे कि हमारी धारणा हमारे कर्त्तव्यों से उस परम शिक्षक परमात्मा की प्रत्यक्षता हो।

सच्चा सतगुरु – परमेश्वर

मानव जीवन में शिक्षक से जीवन-नैया चलाने की कला आती है तो गुरु से जीवन नैया को पार करने की युक्ति और शक्ति मिलती है। इसलिए कहा जाता है- गुरु बिना जग अंधियारा। गुरु बिना मुक्ति नहीं मिलती। मगर, वास्तव में यह सब महिमा उस परमात्मा की है जो ही सच्चा गुरु, सतगुरु और जगत गुरु है। वही सब को मुक्ति-जीवन मुक्ति में ले जाता है। गुरु का प्रिय और परम शिष्य वो होता है जो पग-पग पर अपने गुरु का अनुकरण करता है । एक आदर्श शिष्य बनने के लिए सर्वप्रथम गुरु में अटूट निष्ठा या श्रद्धा, दूसरा दुनायावी आकर्षणों से वैराग और तीसरा साधना के लिए परिश्रम करने की उत्कृष्ट इच्छा होनी चाहिए। गुरुओं के भी सतगुरू शिवबाबा मेरे सतगुरु हैं, मैं उनका परम शिष्य हूं–इस स्वरूप में स्थित होना चाहिए।

खुदा-दोस्त

शैशवकाल में मां-बाप की आवश्यकता है तो बाल्य काल में सखा की आवश्यकता होती है। अगर आप बालक बन खेलना चाहते हैं तो शिवबाबा को अपना सखा बनाकर उसके साथ खेलो, घूमों और खाओ, पियो। अगर कार्यक्षेत्र में सखा के रूप को याद करना चाहते हों तो कोई भी कार्य करने से पहले जिस प्रकार बाप से राय लेते हो उसी प्रकार खुदा दोस्त या सखा से भी राय लो। दोस्ती अधिकतर समान-आयु, समान संस्कार, समान अभिलाषी, समान-कुल और समान जीवन-स्तर वालों के साथ होती है। इसलिए हम भी भगवान् समान अपने को निराकारी, निर्विकारी और निरहंकारी बनायें।

साजन अथवा सजनी

युवा काल में हरेक व्यक्ति जीवन-पथ पर चलने के लिए एक सहयोगी की आवश्यकता हरेक को पड़ ही जाती है। परन्तु दुनिया में जीवन साथी मिलने पर भी आपस में प्रेम, विश्वास, त्याग और सहयोग न रहे या एक दूसरे को धोखा देते हैं तो जीवन-भर पछताना पड़ता है, लेकिन ईश्वर को अपनी सजनी वा साजन अर्थात् जीवन साथी बनाने से जीवन धन्य-धन्य हो जाता है। परमात्मा को इस सम्बन्ध में हम घर में रहते समय, खाना पकाते समय, दिल की बातें सुनाते समय विश्राम के समय में याद कर सकते हैं। परमात्मा ऐसा अविनाशी जीवन-साथी है जो अन्त तक साथ निभाते निर्वाणधाम ले जाते हैं। तो हमारा जीवन कितना धन्य है इस नशे में आप झूमते रहेंगे।

बच्चा

बच्चों बिना घर श्मशान समान होता है, जिसके मां बाप नहीं रहते उन बच्चों का जीवन सूना-सूना-सा रहता है। उसी प्रकार जिन मां बाप को बच्चे नहीं होते उनका जीवन भी सूना-सूना-सा होता है। तो भगवान् को अपना मुरब्बी बच्चा अर्थात् पहला-पहला हकदार, पहला वारिस समझो तो जीवन निश्चितता से बीतेगा। जिसका भगवान् बच्चा बन जाये उसका नाम कितना बाला होगा, उसके कितने कुल का कल्याण होगा! तो जब भी दुनिया के वातावरण से या भिन्न-भिन्न समस्याओं से थोड़ा भी अपने को अकेला व उदास अनुभव करते हैं तो भगवान् को एक सुन्दर बच्चे के रूप में अनुभव करो और उससे खेलो।

मालिक का सम्बन्ध

कार्य करते समय प्रायः दो व्यक्तियों की उपस्थिति बहुत आवश्यक है। एक है काम करने वाला, दूसरा है काम करानेवाला। कार्य को सम्पूर्ण सफल करने के लिए इन दोनों रूपों की बहुत आवश्यकता है। हम कोई कार्य या सेवा करते हैं, उस कार्य-व्यवहार के मालिक बाप-भगवान् हैं, हम तो कार्य करने के लिए निमित्त कार्यकर्ता या सेवाधारी हैं। अतः रोज कार्य-क्षेत्र पर जाते समय उस मालिक से अनुमति और आज्ञा लेकर जायें और रात में सोने से पहले उस मालिक या धर्मराज को अपने दिन भर के काम का हिसाब-किताब (स्थूल और सूक्ष्म) सौंपें। इस प्रकार निश्चिंत होकर उस दिन का पार्ट पूरा करके अपने घर परमधाम को लौटकर परम शान्ति में टिकने का अभ्यास करें।

इस प्रकार हर दिन के हर पल में एक भगवान के साथ सर्व सम्बन्धों को निभाकर अपनी ही एक ऐसी न्यारी और प्यारी दुनिया बसा सकते हैं जिसमें उस एक के साथ सर्व सम्बन्धों का सुख पा सकते हैं। इस प्रकार परमात्मा शिवबाबा हमारे लिए आल इन वन हैं (एक में सब कुछ)। हमें सब कुछ एक में मिलते हैं और एक से मिलते हैं। तो हम कितने भाग्यशाली हैं!

जगदीश चन्द हसीजा, मुख्य सम्पादक, ब्र० कु० आत्म प्रकाश, सम्पादक, बी ९/१९ कृष्णानगर, दिल्ली द्वारा सम्पादन तथा ओम शान्ति प्रैस, कृष्णानगर, देहली-५१ से छपवाया Regd No. 10563/65-D, (E)—70